B/H 69

Budha Deo Chant

Deacidify, laminate
with guard and bind.

बुद्धदेव चरित नाटक
(अपूर्ण)



नाट्य लिखित

पुरुषगण ।

शुद्धोदन ... ... कपिलवस्तु का राजा ।

सिद्धार्थ ... ... राजपुत्र (बुद्धदेव)

सुबोध ... ... मन्त्री ।

सदानन्द ... ... विदूषक ।

बिम्बसार ... ... विन्ध्याचल का राजा ।

चण्डीप्रसाद }
दुर्गाप्रसाद } ... ... पुरोहितद्वय ।

छन्दक ... ... अश्वपाल ।

सारथी, सभासदगण, रोगी, वृद्ध, प्रतिहारी, मिष्टान्न-वाहक, ठगगण, शिष्यगण, संगीगण इत्यादि—

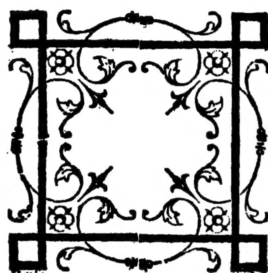
स्त्रीगण ।

गौतमी ... ... कनिष्ठा रानी ।

गोपा ... ... सिद्धार्थ की स्त्री ।

नर्तकीगण इत्यादि —





बुद्धदेव चरित्र नाटक।

(प्रस्तावना)

नट का प्रवेश

नट—(स्वगत) अहो आज क्याही सुप्रभात है ! मैंने इतने दिन से कैसे अच्छे २ साधुजनसमाकीर्ण सभा का सन्दर्शन किया है जिस्की कुछ संख्या नहीं है परन्तु आज के सदृश गुणग्राही भावग्राही रसग्राही साधुजन समन्वित सभा मैंने कुत्रापि दर्शन नहीं किया। आज की सभा देख मेरा नयनधारण सार्थक वो मन अति प्रफुल्लित हुआ। इस सभा को देख कर नन्दन कानन में सुरपति देवराज इन्द्र को जो अति विचित्र सुधर्मा सभा है वह इस समय अति तुच्छ वो हीन बोध होती है। अपि च जिस सभा में राजाधिराज स्वयं महाराज समुपस्थित हैं वो सभा संसार की समग्र सभाओं से श्रेष्ठ है इसमें सन्देह क्या ? आज मेरे असामान्य सौभाग्य से ईदृश सुधीजनपरिवृत सभा में मादृश गुणहीन नट का अभिनय होगा। मुझ में ऐसा कोई गुण नहीं है जिस्से मैं इन सब उपस्थित महोदय महात्मा

गणों का चित्त प्रसन्न कर सकूं। परन्तु जैसे हंस गण नीर-मिश्रित क्षीर प्राप्त होने से नीरांश का परित्याग करके क्षीरांश का ग्रहण करते हैं वैसेही यह सब गुण-ग्राही सभ्यजन समूह मेरे अभिनय का दोषांश परित्याग करके गुणांश का रसास्वादन करैंगे। इस भरोसे से मैं इस विराट् सभा में एक अति क्षुद्र नाटक का अभिनय करने को साहसी हुआ हूं। परन्तु मैं अकेला क्या कर सक्ता हूं। मेरी प्रणयिनी रसरंगिणी सज्जन चित्त प्रसन्नकारिणी चारुहासिनी नटी को प्रथम बुला कर उसके साथ बिचार करके किसी नाटक का अभिनय आरम्भ किया जाय।

प्रकाश्य। प्रिये मनमोहिनी तुम कहां हो? यदि कोई क्षति न होय तो एक बार इस सभा में आओ मुझे दर्शन दो, प्रियतमे प्राणेश्वरी आओ शीघ्र आओ।

नटी का प्रवेश।

नटी—आज आप मुझको इतने रसपूर्ण प्रिय सम्भाषण से क्यों पुकारते हैं, मैं आप की दासी हूं जैसी अनुमति होय वैसाही करूं।

नट—आओ मेरी हृदयानन्ददायिनी आओ। देखो कैसे कन्दर्प सदृश परम रूपवान सभ्यगण नाना विध कारु-कार्य्य खचित परिच्छदों से भूषित होय सभा उज्ज्वल

करते हुये उपस्थित हैं। जैसे नक्षत्र परिवेष्टित निर्मल शारदीय पूर्ण चन्द्र गगनमण्डल में शोभायमान होता है वैसही आज मर्त्यधामस्थ इस सभा में उज्ज्वल पूर्ण चन्द्ररूपी महाराज ने सभासद रूपी नक्षत्रगणों से वेष्टित होकर अति विचित्र मनोहर शोभा धारण किया है। इस प्रकार के विद्यमान भावग्राही रसज्ञ सभ्यजन जिस सभा में उपस्थित हैं उसमें कोई सामान्य नाटक का अभिनय करके सर्वसाधारण में हास्यास्पद होना अच्छा नहीं है इस कारण से तुमको मैंने सलाह करने के निमित्त आवाहन किया है जिससे इस सभा में किस सुरसिक कवि का रसपूर्ण नाटक का अभिनय किया जाय जो आबाल वृद्ध बनिता सब के चित्त को प्रसन्न करे?

नटी—हे नाथ! मैं विद्या बुद्धिविहीना अपरिणामदर्शिनी अबला हूं, इस गुरुतर विषय में मेरा परामर्श ग्रहण करना ठीक नहीं है और इस प्रकार की सभा में किस नाटक का अभिनय करना अधिक उपयोगी होगा इस विषय में हमसे अधिक आप समझ सकते हैं। परन्तु जब आप का अभिप्राय मेरे मत ग्रहण करने का होता है तो मेरे विचार में महा कवि कालिदास कृत शकुन्तला नाटक का अभिनय होना अति

उत्तम मालूम होता है। यदि वह आप को मनोनीत होय तो पुण्यवन्त महाराज दुष्यन्त का चरित्र वो आदर्श ललना सुकुन्तला शकुन्तला का अटल पति प्रेम समग्र सभ्यमण्डली का चित्त प्रसन्न करेगा।

नट—प्रिये! तुम्हारा बिचार यथार्थ है कविकुल श्रेष्ठ कालिदासकृत शृंगाररस पूर्ण शकुन्तला नाटक बालक वृद्ध युवा सब को हृदयग्राही होगा इसमें सन्देह नहीं है परन्तु मैं चाहता हूं कि ऐसे कोई नाटक का अभिनय होय जिसमें भक्ति रस अधिक रहे क्योंकि इस प्रकार की सभा में जहां पिता पुत्र अनुज आदि एकही स्थान में बिराजमान हैं वहां शृङ्गार रस का अभिनय हम अच्छा नहीं समझते हैं। यहां वीर, करुणा, वीभत्स, हास्य इत्यादि रस का अभिनय हमको मनोनीत नहीं है मैं चाहता हूं कि आज कोई भक्ति रस संयुक्त नाटक होय जिसको देखकर सर्व सभासदों के मन में भक्ति और वैराग्य युगपत् भाव का समावेश हो जाय। "अहिंसा परमोधर्म्मः" यह भाव सबके हृदय में भली भांति स्थिर हो जाय। निर्व्वाण मुक्ति का सरल पन्थ सबको दर्शित हो जाय। इस वास्ते इस प्रकार का कोई नाटक उद्भावना करना चाहिए।

नटी—जीवितेश्वर! आप का बिचार सुयुक्ति पूर्ण है उस दिन अति भक्ति रसात्मक नाटक भक्त प्रधान प्रह्लाद-

चरित्र वो ध्रुवचरित्र का प्रसंग मैंने आप के मुख से सुना था जिसको सुन कर मेरा हृदय गद्गद हो गया था। मैं समझती हूं कि उन दोनों नाटकों में से किसी का अभिनय करना बहुत अच्छा होगा। वह दोनों नाटक भक्ति रस में श्रेष्ठ है।

नट—इसमें संदेह नहीं है पंचम वर्षीय बालक ध्रुव ने भगवत् प्रेम से उन्मत्त होकर जिस प्रकार की कठोर तपस्या वो भगवान का ध्यान करके पद्मपलाशलोचन श्रीकृष्णजी महाराज का साक्षात् दर्शन लाभ किया था इसका द्वितीय दृष्टान्त संसार में मिलना दुष्कर है, भगवत् प्रेमिक प्रह्लाद का अमृत तुल्य चरित्र भी संसार में अतुलनीय है परन्तु भक्ति तथा वैराग्य, स्वार्थत्याग तथा परोपकारिता और अहिंसा इत्यादि सब का समावेश एकही आधार में रहे और जिस महात्मा का स्वार्थ त्याग देख कर सब कोई सस्मित हो जाय, दया और हिंसा शून्यता देख कर मन मोहित हो जाय, अति कठोर तपस्या देख कर शरीर रोमांच हो जाय वो जिसकी सिद्धि वो सुधा सदृश उपदेश सुन कर मन मुग्ध हो जाय, ऐसे गुणों से संयुक्त किसी महात्मा के गुणकीर्तन करके आज की सभामण्डली को हर्षोत्पादन कराना आवश्यक है।

नटी—हे नाथ ऐसा कोई नाटक तो मेरी समझ में नहीं आता है क्या कोई ऐसाभी महात्मा संसार में हुआ है?

नट—अब नहीं है किसी समय में रहा—

"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म्मसंरक्षणार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥"

भगवान ने स्वयं अपने मुख कमल से इस श्लोक को कहा है इस वास्ते भगवान के मत्स्य, कूर्म्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, बलराम होकर बुद्ध अवतार हुये इन सब अवतारों में से बुद्ध अवतार का नाटक अभिनय करने का आज मेरा उद्देश्य है। मैं समझता हूं इस नाटक का अभिनय सब के चित्त को प्रफुल्लित करेगा।

नटी—हे नाथ! जीवितेश्वर बड़ी भारी असम्भव वार्ता आज आप ने कही, मैंने सुना है बौद्ध धर्म्म आर्य्य धर्म्म नहीं है और बौद्ध धर्म्म को जिन्होंने प्रचार किया था वह भी भगवान करके अज्ञानीनिर्बोध मनुष्य गण को नास्तिक शिक्षा दी थी इसलिये मैं कहती हूं कि ऐसे हिन्दू धर्म परायण सभ्यजनमण्डली में आप ने किस तौर उनके जीवनचरित्र का अभिनय करने का उत्साह किया जिसने समस्त जगत को नास्तिकता के अन्धकार में डाल देने का उद्योग किया था।

नट—नहीं सरलहृदये! ऐसा नहीं है यह धारणा तुम्हारी भूल है। जगतोद्धारकर्त्ता जगन्नाथ बुद्धदेव ने कभी

नास्तिकता का प्रचार नहीं किया था, उनका साक्षात् धर्म्म का अवतार रहा*। 'अहिंसा परमो धर्म्मः" जिसका मूल मंत्र है परद्रव्यहरण परदारअभिलाषी मिथ्याकथन, मादकसेवन, परपीड़न इत्यादि को सम्यक् परिवर्जन करना जिस धर्म का अंग है वो जिन्होने भिक्षालब्ध अन्न पर जीवन निर्भर किया और अति कठोर कठिनतर तपस्या करके सिद्धि अवस्था में जो ज्ञान लाभ किया वह ज्ञान कभी नास्तिक को नहीं हो सक्ता है। अपने मत को समर्थन करने के लिये कोई २ शास्त्रान्ध मनुष्य निरपेक्ष सरल मत छोड़ के अपने मत को अभ्रान्त सूचित करने के निमित्त कूट बुद्धि का आश्रय ग्रहण करते हैं। इस प्रकार के स्वार्थपर स्थूलदर्शी विचारशून्य पुरुष गण जो भगवान के पूर्ण अवतार करुणामय बुद्धदेव को नास्तिक मत प्रचारकारी कहते हैं उनको कहने दो परन्तु जब कोई अति सूक्ष्म दृष्टि से इस परम पवित्र पुरुष की अमानुषिक जीवनी, असाधारण वैराग्य, परम त्याग कठोर तप, अतुलनीय सदोपदेश निर्वाण मुक्ति का सुगम पथ प्रचार इन सब को हृदयङ्गम करेंगे वे पुरुष इस धर्म्म को म्लेच्छ वा नास्तिक धर्म्म नहीं कहेंगे। नास्तिकता किसको कहते हैं? चार्वाक मत अवश्य नास्तिक धर्म है उनका

सिद्धान्त यह है "ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्" इसप्रकार की स्वार्थपरता इस धर्म में नहीं है। जिस समय धर्म का नाश होने लगता है और अधर्म की उन्नति होती है उस समय परम कारुणीक परमपुरुष परमेश्वर का संसार में अवतार होता है, दर्पहारी सबके दर्प को चूर्ण करते हैं जैसे बलिराज के वास्ते बामन, क्षत्रियवंश-ध्वंश करने को परशुराम और राक्षसकुल निर्मूल करने को राम प्रकट भये उसी तरह आदि पुरुष के जितने अवतार होते हैं सबका एक एक महत् उद्देश होता आया है ऐसेही बुद्धदेव का भी एक महत् अति गूढ़ कारण यही है कि जब संसार में घोर हिंसा वो पशुघात रूपी स्रोत अति प्रबल हो गया था तब उस समय उसके दमन करने के लिये जीवहत्या बन्द करने के निमित्त स्वयं हृषिकेश ने बुद्धबेष धारण किया था क्योंकि वैष्णवकुल श्रेष्ठ महाकवि जयदेव भी कहते हैं।

"निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातं,
सदयहृदयदर्शितपशुघातं।
केशव धृतबुद्धशरीर, जय जगदीश हरे" ॥

नटी — हे स्वामी! आज आपके अमृतमय वचन सुन के मेरा भ्रमान्धकार दूर हो गया। मुझ को नहीं मालूम था कि इसके भीतर ऐसा सुन्दर भाव है। आज के सभा में यह नूतन नाटक का अभिनय सबको मनोरंजन

अवश्य होगा। और आप का भी अभीष्ट सिद्ध हो जायगा जैसे अपने इन्द्रियं सुख चरितार्थ करने के वास्ते सहधर्मिणी सहवास करने से पुन्नाम नरकत्राता पुत्रोत्पादन होता है वैसेही आज बहुजनाकीर्ण महती सभा में बुद्ध देव का महात्म्य वो गुण कीर्तन करके सबको हर्षोत्पादन उपरान्त परोक्षभाव में बौद्ध धर्म्म का भी उपदेश प्रचार हो जायगा। अच्छा तो, चलिये अभिनय उपयोगी बेष पहिर कर दर्शक समूह के सामने रंगालय में प्रवेश किया जाय।

नट—और क्या, जब नाटक अभिनय का प्रसंग स्थित हो गया तब उसका आरम्भ कर्तव्य है। अब देर करने से सभ्य महोदय की धैर्य्य च्युति हो जायगी। भरोसा मुझ को यही है कि इस सभा में सब सज्जन हैं।

(सज्जनागुणमिच्छन्ति दोषमिच्छन्ति पामराः।
मक्षिकाव्रणमिच्छन्ति मधुइच्छन्ति षट्पदाः ॥)

आइये चलिये!

नट व नटी का प्रस्थान।

(जवनिकापतन)

प्रथम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

कपिलवस्तु राजप्रासाद ।

क्रीड़ाभवन का अभ्यंतरप्रदेश ।

(योगासन पर सिद्धार्थ का उपवेशन)

सि०—(स्वगत) जिस कार्य करने के निमित्त मानव शरीर धारणपूर्वक मर्त्यधाम में मैं अवतीर्ण हुआ हूं उस कार्य के सम्पादन करने का समय उपस्थित हुआ है अब निश्चिन्त होकर मनुष्योचित क्रीड़ा कौतुक आनन्दोत्सव में निमग्न रहना मेरा उचित नहीं है स्वार्थ पर विचारशून्य अज्ञानी मूढ़ मनुष्य गण को हितोपदेश प्रदानपूर्वक यथार्थ ज्ञान मार्ग व मुक्ति का प्रकृत पथ प्रदर्शन करना केवल वाक्य से अथवा समझाने से कभी नहीं होगा। योगमार्ग अवलम्बन करके अपने तपस्या से सबका ज्ञान चक्षु उन्मीलन करना चाहिए । अब हमको इस माया मोह का बन्धनयुक्त संसार परित्याग करना आवश्यक है कार्यक्षेत्र में आ गये हैं अब कार्य आवश्य कर्तव्य है मेरा कार्य समग्र संसार को कार्य का आदर्श होगा समग्र जगद्वासी मेरे कार्य का पथानुसरण करके चलेंगे यही इस अवतार का परम उद्देश है। सत्य, त्रेता, द्वापर आदि युग में जो जो अवतार

धारण किया था उसमें वीरभाव अधिक रहा धरणी का भारहरण करना रहा। और इस अवतार में केवल शान्तभाव व हिंसाशून्यता।

(चक्षुद्वय मुद्रित करके योगासन पर अवस्थित)

[धनुर्बाण हस्त में लेकर योद्ध वेश्म में बलदेव वासुदेव भैरव व अमरकेतु का प्रवेश]

वीर चतुष्टय—राजकुमार का जय होय हमलोग अभिवादन करते हैं।

सि०—(चक्षुरुन्मीलनपूर्वक प्रति नमस्कार)

बल०—हे राजकुमार! आज महाराजबहादुर की अनुमति हुई है हम सब बन में शिकार खेलने चलेंगे, आपको भी मृगया उचित वस्त्रादि परिधानपूर्वक वर्म चर्म से शरीर आवृत करके हमलोगों के साथ चलना होगा।

वासु०—हे युवराज! महाराज बहादुर का यह अभिप्राय है कि आज मृगया की बहुत अच्छी साइत है कुमार मृगया का आरम्भ कर दे। आइन्दा हलाकर्षण उत्सव में आपही को सुवर्णलांगल लेकर सब का अग्रगामी होना होगा।

भैरव—हे पृथ्वीनाथ! जैसे लिखना पढ़ना भी एक विद्या है विना लिखे पढ़े ज्ञान नहीं होता और कार्य निर्वाह करना अति कठिन होता है वैसेही धनुर्विद्या भी रा-

जाओं के लिये अति विशेष आवश्यक है धनुर्विद्या का अच्छी तरह से पारदर्शी न होने से संसार में निन्दा होती है व शत्रुपक्ष का भी आशंका रहती है। राजा लोगों को मृगया कुशल होना महा गुण है।

अमर०—हे राजपुत्र ! एक दफे जब आप के हाथ शिकार लग जायगा तब आपको इसका आनन्द मिलेगा अब विलम्ब न करना चाहिए महाराज बहादुर के अनुमति से राजकीय पटमण्डप सब आगेही बन में चला गया है हाथी घोड़ा व विविध शकट सकल प्रस्तुत होता है ढाल तलवार बल्लम आदि विविध शस्त्र लेकर अनेक सैन्य भी सज्जित होता है आप भी तयारी कर लीजिये।

सि०—हे भाइयो हमको माफ कीजिये शिकार हमारा किया नहीं होगा। उस दिन हमारे एक अनुचर ने मेरे सामने एक हरिणशिशु को तीक्ष्ण तीर से विद्ध किया था उसका कातरता देखकर व आर्तनाद सुन कर मेरा हृदय विदीर्ण हो गया था उसका निर्दोष सकरुणायन्त्रणायुक्त नयन की दृष्टि हमारे मर्मस्थान को जैसे बाणविद्ध कर दिया था जब जब वह भाव हमारे हृदय में उदित होता है तब तब हमको अश्रुपात होता है। हे भाइयो बिना कारण किसी का प्राणनाश करना मेरे इच्छा के विरुद्ध है हमको माफ कीजिये।

हे युवराज यह मृगया की तयारी महाराज ने अपने ही अभिप्राय से किया है हमलोगों का इसमें कोई अपराध नहीं है अब जैसा आपका अभिप्राय हो।

हे अनुचरगण मृगया में हमारा कुछ भी अनुराग नहीं है परन्तु देखने से मेरा चित्त बहुत दुखी होता है इसलिये मैं कहता हूं मेरा अपराध क्षमा कीजिये हिंसा का नाम भी सुनने से मेरे आंखों में आंसू भर आता है।

वासु०—हे कुमार दुर्बल प्राणियों का संहार करके भक्षण करना यह सब आपका नियम है इस कारण से जगत्कर्ता जगदीश्वर ने संसार में खाद्य व खादक सम्बन्ध निर्णय करके जीव सृष्टि किया है। जैसे कि पक्षियों को खानेवाला सर्प और अहिकुलनिर्मूल करनेवाला नकुल व मयूर है वैसेही सिंह व्याघ्र आदि बलवान जानवर सब का संहार करके भक्षण करना वैसेही छाग में हरिणादि मनुष्य जाति का आहार सामग्री है।

सं०–नहीं भैया यह बात नहीं है सिंह व्याघ्रादि हिंस्र जन्तु की बात दूसरी है वह सब जीव गण को ज्ञान नहीं है केवल उदरपूर्ण व इन्द्रिय चरितार्थ करने का प्रकृति मात्र है और मनुष्य गण हिताहित ज्ञान बुद्धि सम्पन्न है व धर्म प्रवृत्ति संयुक्त हैं इसलिये और सब

इतर प्राणियों मे मान्य व श्रेष्ठ हैं। हे सखि गण सुनो किसी को क्लेश देना, पीड़न करना, वा जीवन से मारना. कभी उचित नहीं है । पीड़ा देने से सबको क्लेश होता है। जैसे किसी प्रबल शत्रु के पीड़ा देने से तुमलोगों को क्लेश होगा इसी तरह सब प्राणियों को होता हैं ।

वासु०—हे राजकुमार ! खाद्य खादक सम्बन्ध में यह सब विचार नहीं करना चाहिए । दया करने से उदर पूर्ण नहीं हो सका ।

सि०—हे सखे ! दया के बराबर कोई दूसरा धर्म्म नहीं है. जिसके शरीर में दया माया नहीं है वह अधम मनुष्य से और व्याघ्रादि अति भयानक हिंस्र जानवर से कोई भिन्न भाव नहीं है । हे भाइयो ! आपही लोग कहिये मनुष्य का उदर क्या केवल जीवमांसही से पूर्ण होता है ! और कोइ सात्विक भोजन वा हविष्यान्न से मनुष्य की जठर ज्वाला निवृत्त नहीं हो सकी ?

अमर—हे युवराज ! मनुष्य का उदर कई एक प्रकार से पूर्ण हो सका है । चर्व्य चोष्य लेह्य पेय इत्यादि नाना विधि उपादेय भौतिक खाद्य सामग्री द्वारा जो उदर पूर्ण होता है उसका नाम आधिभौतिक उदर पूरण है और एक मूठी चना खाकर पेट भर जल पीने से

जो उदर पूरण होता है उसको आध्यात्मिक उदर पूरण कहते हैं और दैवानुग्रह से प्लीहा बरवट यकृतादि रोग द्वारा जो उदर सर्वदाही पूर्ण रहता है उनको आधिदैविक उदर पूरण कहते हैं। हे कुमार! परन्तु अच्छे द्रव्य के ऊपर सब किसी की लालसा रहती है।

सि०—हे सखे! लोभही से पाप संचय होता है सब तरह से लोभ का त्याग करना उचित है और मृगया आदि तो व्यसन है इसका भी परित्याग करना चाहिए। आप लोग जाइये हमको माफ कीजिये मैं नहीं जाऊंगा।

बलदेव, बासुदेव, भैरव एवम् अमर का कुमार को अभिवादन व प्रस्थान।

योगासन पर सिद्धार्थ का पुनरुपवेशन।

पटक्षेपण।

प्रथम अङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

कपिल वस्तु राज अन्तःपुर।

राजा शुद्धोदन वो राज्ञी गौतमी आसीना—

राजा—हे महेशी इस वृद्ध दशा में कुमार सदृश सुकुमारमति कुमार को प्राप्ति होकर जिस प्रकार के आनन्द

सागर में भासमान हुआ था वो जिस प्रकार सुखाऽमृत पान किया था सो तुमको मैं क्या बतलाऊं, परन्तु जब से दैवज्ञ ज्योतिषी पण्डित गणों ने कहा कि इस बालक ने जिस लग्न में जन्म ग्रहण किया है यदि यह संसार में रह जाय तो राजाधिराज चक्रवर्त्ती होगा और सब प्रजा इसके वश में रहैंगी अनुपक्षी और राजन्यवर्ग भी इसकी वश्यता स्वीकार कर के प्रद न करेंगे और यद्यपि संसार छोड़ के साधुवृत्ति अवलम्बनपूर्वक भगवान के ध्यान में रह जाय तो समग्र संसार में एक अभिनव निर्वाण मुक्ति का पन्थ अपने तपोबल से दिखावेगा।

रानी—हे महाराज दिन पर दिन कुमार का संसार से वैराग्य देख कर मेरी सब आशा भरोसा निर्मूल होती जाती है मैंने उसको इतना समझाया बुझाया और रुदन भी किया परन्तु कुमार कुछ भी नहीं सुनता।

राजा—हे राज्ञी मैं भी अनेक प्रकार का उपाय अवलम्बन कर के हार गया हूं अच्छे २ पण्डित बुलाय के संसार धर्म की श्रेष्टता गृहस्थाश्रम का उत्कर्षताविषयक नाना प्रकार की युक्ति दिखाया उपदेश दिया परन्तु कुछ भी फल न हुआ।

रानी—हे पृथ्वीनाथ! यह सब बात मैंने अच्छी तरह से देखा है कुमार का हृदय अब संसार में लिप्त नहीं है,

है महाराज यदि कुमार संसार छोड़ देयगा तो मैं भी अनसन व्रत अवलम्बन कर शरीर पात करूंगी।

राजा—हे पुत्रवत्सले प्रियतमे। संसार में माया मोह ऐसाही है; जब से इस बालक का जन्म हुआ है तब से मेरा भी चित्त दिन रात उसी के ऊपर जैसे ध्यान लगा रहता है। ज्येष्ठा महिषी तो प्रसव करके इसको सद्यः प्रसूत अवस्था में छोड़ के निश्चिन्त होकर अमरधाम में चली गई परन्तु ————

रानी—हे महाराज मैं अभागिनी हूं इस बालक को अपने गर्भजात सन्तान से अधिक स्नेह ममता के साथ लालन पालन करके ऐसे मायाफाँस के बन्धन में बद्ध हो गई हूं कि हमसे इसका संसारत्याग दशा नहीं देखा जायगा (रोदन)

राजा हे महिषी इस बालक का जन्म वृत्तान्त भी एक अति विचित्र आश्चर्य व्यापार है सुनो किसी सारदीय पूर्णिमा को रात्रि समय में हम और तुमारी जेष्ठा भगिनी एक गेह के भीतर निद्राभिभूत रहे अर्ध रात्रि के बाद गम्भीर निशीथ समय में जेष्ठा रानी को अकस्मात् निद्रा भंग हो गई और हमको जगाय के कहा कि हे महाराज घोर निद्रावस्था में मैंने आज एक अति अद्भुत स्वप्न देखा है और उस स्वप्न को देख कर

मेरी निद्रा भंग हो गई स्तम्भित होकर अकस्मात् रानी को ऐसी अवस्था में देख कर हमने कहा कि कैसा स्वप्न है ज्येष्ठा रानी ने उत्तर दिया कि हे महाराज आज शारदीय पूर्णिमा है इस निमित्त सायंकाल में अन्त:पुरप्रासाद के ऊपर से मैंने कौतूहलप्रयुक्त उदयमान चन्द्रमा की शोभा सन्दर्शन किया था रात्रिकाल में स्वप्न देखा कि जैसे कोई तेजमय पदार्थ आकर मुझे चन्द्रलोक में ले गया है।

रानी - हे महाराज जेष्ठा भगिनी स्वप्न में चन्द्रलोक को गई थी ?

राजा—चन्द्रलोक या कौन लोक यह मैं नहीं कह सक्ता क्योंकि जेष्ठा राज्ञी ने कहा था स्वप्न में जिस लोक मे उनको ले गया रहा उसमें केवल ज्योति दिखलाई देती थी अन्धकार का चिन्ह मात्र भी नहीं था इस कारण से उन्होंने अनुमान किया कि यह अवश्य चन्द्र लोक था कारण सायंकाल में भी राज्ञी ने चन्द्रमा को बहुत देर पर्यन्त देखा था।

रानी—जो कुछ हो हे नाथ तब उसके बाद क्या देखा ?

राजा—उसके बाद यह कहा कि किसी ज्योतिर्मय स्थान में ज्योंही मैं पहुंची वैसेही एक सर्वांगसुन्दरी युवती ने नाना विधि वस्त्रालंकार से भूषित आके, जैसे बहुकाल

की परिन्थित वैसेही सहास्य बदन अति मिष्ठ प्रिय संभाषण से मुझे ले जाकर एक अति विचित्र रत्नसिंहासन पर बैठाया जहां महिषी कहती थीं कि उस स्थान की जितनी वस्तुयें थीं सब सुन्दर वो मनोहर रहीं।

रानी—ऐसी! हे महाराज तब, उसके बाद कहिये, सुनने के निमित्त मुझे अत्यंत आग्रह है।

राजा—हे राज्ञी सुनो तो आग्रह की बातही है। उसके बाद राज्ञी ने कहा था जैसेही मैं उस मणिमय सिंहासन पर बैठी वैसेही एक नवजलधरस्यामकान्ति बालक अति प्रफुल्लित हास्ययुक्त बदन से हमको मातृ सम्बोधन करके हमारे क्रोड़ पर आ बैठा मैं भी अतुल आनन्द में मग्न होकर जैसेही उसका बदन चुम्बन करने के निमित्त मृणाल सदृश बाहु युगल धारण कर उठाया वैसेही वह बालक अति सूक्ष्म देह धारण कर के मेरे उदर में प्रवेश कर गया एवं ठीक उसी समय निद्राभंग हो गई।

रानी—हे हृदय बल्लभ ये सब वार्ता सुन के मेरे शरीर में रोमांच होता है तब उसके बाद क्या हुआ था कहिए!

महाराज—महिषी की निद्रा भंग होने पर उसका चित्त विभ्रम हो गया था कुछ देर के बाद पुनः प्रकृतिवस्थ होकर के यह स्वप्न वृत्तान्त मुझ को कहा था। हे प्रा-

खेश्वरी इस प्रकार की अति अदभुत आश्चर्य स्वप्न विवरण सुन के मैं भी उस समय में विचारशून्य हो गया था परन्तु किसी प्रकार से रात्रि जागरनपूर्वक प्रातः-काल मैंने एक विशेष सभा करके प्रधान २ जोतिर्विद पण्डितगण वो महामहोपाध्याय सर्व शास्त्राध्यापक आचार्यदेव को आवाहन किया था एवं जेष्ठा राज्ञी का आमूल स्वप्न वृत्तान्त वो महात्मा गण के समक्ष वर्णन किया ।

रानी—हे महाराज तब उन ज्योतिषी पण्डितगण वो आचार्यदेव ने यह सब वार्त्ता सुन के क्या कहा ?

राजा—हे महिषी परम श्रद्धास्पद आचार्यदेव ने समस्त ज्योतिषी पण्डितगण में मिलित होके एक वाक्य में कहा, हे महाराज आप अति भाग्यवान महापुरुष हैं, इस प्रकार के स्वप्न का यही फल है जो भाग्यवती सती यह स्वप्न देखे वह रमणी यदि बन्ध्या होय तथापि निश्चय गर्भवती होगी और कोई महापुरुष आके सन्तानरूप धारण कर अवनि में अवतीर्ण होगा । हे महाराज आप धन्य हैं अब आपकी कामना पूर्ण होगी ।

रानी हे नाथ यह सब बात सुन कर मेरा हृदय उद्वेलित हो गया हर्ष वा विषाद से मेरा मन ऐसा क्या जाने कैसा हो गया जो मैं किसी प्रकार से प्रकाश नहीं कर

सती हूं तब फिर क्या हुआ कहिये नाथ, मेरा आग्रह बढ़ता जाता है।

राजा—हे प्रियतमे ! ज्योतिर्वित् पण्डितगणों का बचन व्यर्थ नहीं हुआ स्वल्पकाल गत होने पर जेष्ठा राजमहिषी का गर्भसंचार सम्वाद नगर में सर्वत्र प्रचार हो गया मैं भी आग्रह से महिषी का सकल प्रकार की अभिलाषा सफल करने के निमित्त विधिवत प्रकार से यत्न किया था दस मास गत होने पर यथा समय में रानी ने पूर्ण शसिधर सदृश सुकुमार एक पुत्र प्रसव किया. शाक्यकुल के रीति से यथा शास्त्र बालक को जात क्रया नाम करण संस्कारादि किया परन्तु जब से ज्योतिर्वित् पंडितगण की यह बात सुनी है तब से मेरा हृदय मग्न हो गया है महिषी अब दिन पर दिन मेरे हृदय में केवल वही भावना बद्ध मूल हुई रहती है अब मैं कौन उपाय अवलंबन करूं जिसस कुमार संसार में रह जाय।

रानी—हे दीनपालक यह बालक अब यौवन अवस्था को प्राप्त होने चाहता है यह अवस्था संसार शक्ति वो वैराग्य उभय पथ का सन्धिस्थल है इस काल में जीव मात्र का सब प्रकार इन्द्रिय तेज पूर्ण होता है काम क्रोध लोभ मोहादि मनोवृत्ति सकल प्रबल होती है।

हे नाथ बहु प्रकार का राज उपाय व्यर्थ हो गया है परन्तु अब एक अति छोटा सा उपाय मेरे मन में आ गया है यदि आपका अभिप्राय हो तो यह उपाय अवलंबन किया जाय।

राजा—हे शुभे कहिये कौन उपाय तुमने उद्भावना किया। नदी स्रोत में पतित निरुपाय मनुष्य जैसे तृणखण्ड को भी आश्रय समझ के अवलम्बन किया करता है वैसेही सकल प्रकार का उपाय मैं भी दिखा कर अब तुम्हारा आविष्कृत उपाय देखूँगा।

रानी—हे जीवितेश्वर जब बड़े भारी २ विद्वान पण्डित गण का शास्त्र कथा वो नाना बिधि उपदेश विफल हो गया है तब कुमार को संसार में आबद्ध करने के निमित्त प्रमोद कानन में नाना प्रकार का बिलास द्रव्य सज्जित करके दम्पती को अर्थात् कुमार वो बधू को उसमें बिहार करने के निमित्त रक्खा जाय।

राजा—हे सरल हृदये इस कारण से मैंने इतना शीघ्र कुमार को परिणय सूत्र से आबद्ध किया है और देखो यह विवाह का मैंने कैसे उत्तम नूतन नियम आविष्कार किया था पौराणिक राजगण जैसे अपने २ कन्या के विवाह में कोई २ ने स्वयम्बर सभा कर के नाना स्थान के राजन्यवर्ग को निमन्त्रण दानपूर्वक आवाहन

करते थे वो स्नेहपालिता कन्या के अभिमत से किसी पात्र को कन्यादान किया करते थे इसका कारण यही है की कन्या अपने मनोमत पति देख ले।

रानी—हे महाराज यह नियम अति उत्तम है।

राजा—इसमें सन्देह क्या मैं भी इसका पक्षपाती हूं इस कारण से मैं अति विचित्र सुवृहत् एक मन्च निर्माण कराय के जिसके भीतर श्रृङ्गार रस का नाना विधि चित्र स्थापित किया था वो जिसके मध्यस्थल में सुवर्णमय एक सिंहासन रख के कुमार को उसमें बैठा दिया था जिसका नाम परिणय सभा रखाया था और पूर्वही से हमारा अधीनस्थ नृपतिवृन्द के निमन्त्रण पत्र दिया था जो कि जिसका २ अविवाहिता कन्या विवाह योग्य है लेकर कपिलवस्तु के राजप्रासाद में अशोकभाण्डोत्सव के दिन अवश्य करके उपस्थित होंय उस दिन श्रीमान राजकुमार सिद्धार्थ का परिणयोत्सव होगा।

रानी हे महाराज वो सभा जैसे देवसभा ऐसेही चमत्कृता हुई थी और उस उत्सव का आनन्द जब स्मरण किया जाय तभी हृदय में परम आनन्द उपस्थित होता है।

राजा—हे राज्ञि यह बात ठीक है मैं भी वैसा आनन्द का भोग कभी नहीं किया जब भूपति सब अपनी अपनी कन्या लेकर विविधवेष विन्यास कराय के कुमार के

निकट प्रेरण किया कुमार भी पर्याय क्रम से एक २ हेमघट कन्यागण को बण्टन किया एवम् अन्त में जिस कन्या के ऊपर सिद्धार्थ का अनुराग प्रकाश देखा गया उसी के साथ कुमार का परिणयन कर दिया गया है—मैंने यह भी सुना है कि बधू भी अपने कान्त के ऊपर एकान्त अनुरागिनी है।

रानी—हे कान्त आपने जो इस विवाह की नूतन प्रणाली अवलम्बन किया था किसी समय में कोई राजा ऐसा अद्भुत नियम कभी नहीं किया था परन्तु यह अति उत्तम उपाय उद्भावित हुआ है अब कुमार को पत्नी सहित प्रमोद कानन में रखने की व्यवस्था करना चाहिए—

राजा—हे गुणवति तुम समझती हो कि यह उपाय मैंने नहीं किया था मेरे जान तो कोई उपाय मैंने बाकी नहीं रक्खा।

रानी—हे महाराज तब कुमार के विषय में अब कौन उपाय किया जाय—

राजा—हे साध्वि इतने दिनों से इस विषय का किसी के साम्हने प्रकाश नहीं किया था परन्तु आज मै सभा में जाके इस विषय मे समस्त सभासद वो मन्त्रिवर्ग के

साथ परामर्श करूंगा आज का मेरा प्रथम कार्य्य यही है सभा का भी समय हो गया है अब मैं जाता हूं—

रानी—हे महाराज ! कुमार बिना प्राण नहीं रहेगा।

राजा—जो कुछ हो इश्वरेच्छा।

प्रस्थान।

पट परिवर्तन।

प्रथम अङ्क।

तृतीय गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु राजसभा—

सुबोध मन्त्री सदानन्द विदूषक सभासद चतुष्टय आसीन चँवरधारि द्वय सिंहासनपार्श्व में दण्डायमान।

प्र० स०—हे मन्त्रिन् कुछ दिन पर्य्यन्त महाराज को कुछ विशेष भावनायुक्त मलिन वो राजकार्य परिदर्शन में शिथिलप्रयत्न देखते हैं इसका कारण यदि प्रकाश करने योग्य होय तो सुनाय के हमलोगों के समुत्सुक अन्तष्करण को परितृप्त कीजिये।

सदानन्द—उस दिन मैंने भी महाराज को एकान्त में बैठे हुये करतल कपोल संलग्न कर के गम्भीर चिन्तामग्न देखा था और जब अवसर हो के महाराज के अति निकटवर्त्ती हुए तब देखा कि महाराज का उभय

गण्डस्थल अश्रुधारा से सिक्त हो रहा है नेत्र युगल रक्त वर्ण वो कण्ठरुद्ध हो गया था महाराज की इस प्रकार विषादभाव पूर्ण अवस्था देख कर मेरा हृदय विदीर्ण हो गया।

द्वि०स०—ज्येष्ठा महारानी साक्षात लक्ष्मीरूपिणी थीं जब से उनका यह अकस्मात् अकाल मृत्यु हुआ तब से महाराज के चित्त का सब सुख नष्ट हो गया ऐसी गुणवती पतिव्रता स्त्रीरत्न बहु भाग्य से मिलती है।

तृ०स०—कनिष्ठा राज्ञी भी वैसीही गुणयुक्ता हैं किसी तरह से न्यून नहीं हैं।

सदा०—परन्तु पत्नीवियोगजन्य शोक अति असहनीय है।

च०स० –ज्येष्ठा राजमहिषी के परलोक प्राप्ति होने पर कुछ दिन बाद महाराज का चित्त प्रसन्न हो गया था शोक कभी चिरस्थायी नहीं रहता महाराज तब सर्व प्रकार के आमोद उत्सव में योग्य दान किया करते थे परन्तु अभी थोड़े दिनों से महाराज को यह विषम मनोविकार उपस्थित हुआ है।

प्र०स०—कुछ विशेष कारण होगा।

सदानन्द– जो कुछ हो परन्तु महाराज का ईदृशभावान्तर देखकर हमलोगों के मनमें अत्यन्त भावना होती है।

प्र॰स॰—देखिये अभी तक महाराज सिंहासन पर आकर विराजमान नहीं हुए। सब हैं, केवल महाराज के अनुपस्थित हेतु सब शून्य बोध होता है।

सदानन्द "एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारासहस्रशः।"

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी सब सावधान हो रहिए।

(सब का उठ के दण्डायमान होना विमर्श भाव में महाराज का प्रवेश सब को महाराज का अभिवादन करना महाराज का भी सब का प्रत्यभिवादन करना और महाराज का सिंहासन पर उपविष्ट होना एवम् स्व स्व स्थान में सब का उपवेशन कुछ समय पर्यन्त राजसभा निस्तब्ध)—

महाराज—क्या सदानन्द आज आप भी निर्वाक् और निरानन्द हो बैठे हैं इसका कारण क्या है—

सदानन्द हे महाराज मैंने सुना है किसी विज्ञानवित् पण्डित ने कहा है कि चन्द्रमा को कुछ ज्योति वा किरण प्रकाशक उज्ज्वलता शक्ति नहीं है महा तेजमय पदार्थ सूर्यदेव ने अपनी रश्मि से निशापति को ऐसही सुन्दर मनोहर आलोक प्रकाशक वस्तु कर दिया है यदि किसी कारण से सूर्यनारायण स्वयम् निस्तेज हो जांय तो चन्द्रमा की ज्योति कहां रहैगी वैसाही हे पृथ्वीनाथ आपही के परम आनन्द की छाया मात्र अव-

लम्बन करके यह चिरानुगत किंकर सदानन्द सदानन्द रहा परन्तु आपही को निरानन्द देखकर मैं कैसे सानन्द रह सक्ता हूं।

महाराज—हे सदानन्द इतने दिन पर्यन्त मेरे हृदय के महद्दुःख का कारण मैंने किसी के समक्ष प्रकाश नहीं किया। भीतर २ अपने मन से मैं जो कुछ किया रहा परन्तु अब क्रमशः मेरे सब भरोसा उद्योग यत्न आदि विफल हो जाता है। उपस्थित मैंने मन में यही बिचार किया कि आर्यवंशीय नृपतिवृन्द जैसे वृद्ध अवस्था में गृहस्थाश्रम परित्यागपूर्वक मुनिवृत्ति अवलम्बन किया करते थे वैसाही मैं भी राज्य छोड़ के बन प्रवेश करूंगा।

मंत्री—हे पृथ्वीनाथ! सामान्य वात्या से हिमालय कभी बिचलित नहीं होता है कौन ऐसा कारण उपस्थित हुआ है जो स्वहृदय बदना को अपने मनही में प्रच्छन्न रख के ऐसे दुखी हुए हैं अपने मन कष्ट को नष्ट करने के निमित्त कष्ट का कारण प्रकाश करना चाहिए, हे कृपानाथ! हमलोगों का हृदय विदीर्ण हो जाता है।

सदानन्द—हे महाराज! कहिये कौन ऐसा कारण है जिसमें भवदीय बदन सुधाकर ऐसा मलीन हो गया है कहिये पृथ्वीनाथ! मैं प्राणार्पण करके इसका प्रतिकार उपाय निश्चय करूंगा।

राजा—नाना प्रकार का उपाय कर के मैं हार गया नितान्त निराश हो गया कोई कृतकार्य नहीं हुआ।

मन्त्री—हे महाराज ! बहु प्रकार का राजोपाय वो यत्न विफल हो गया कोई तरह से कार्योद्धार नहीं हुआ धिक् हमलोगों को है।

राजा—नहीं मन्त्री इसमें आपका कुछ अपराध नहीं है मैं निज मन्द भाग्य से अकृतकार्य हुआ।

सदानन्द—हे शाक्यकुल नरेश ये विषम मन: कष्ट का कारण क्या है।

राजा—हे सखे ! जब से मेरे हृदयानन्द नन्दन का जन्म हुआ है तब से मेरा चित्त उसी के ऊपर जैसे ध्यान लगाये रहता है ये पुत्र मेरे वृद्ध अवस्था का एक मात्र अवलम्बन है जैसे अन्ध का नयन खंज का यष्टि, दरिद्र का धन होता है वैसाही कुमार मेरा जीवन सर्वस्व है बिना कुमार का मुखचन्द्र निरीक्षण किये मेरा जीव धारण करना नितान्त असम्भव हो जायगा।

सदानन्द—(आश्चर्य होकर) क्यों महाराज कुमार को कुछ अमंगल हुआ है आज प्रातःकाल में भी मैंने स्वयं अपने आंख से राजपुत्र को सबल वो स्वस्थ शरीर से उपविष्ट देखा था जैसे किसी पर ध्यान लगाय के—

राजा—हे ब्राह्मण देवता वही ध्यान लगानाही तो मेरा सर्वस्व नाश किया है।

सदानन्द—कैसे ये कैसे ?—

राजा—हे वयस्य मैं क्या करूं कुमार के मन में अति कठोर वैराग्य संचार हो गया है पिता माता स्त्री पुत्र बंधु और स्वजन आदि किसी के ऊपर उसका स्नेह ममता नहीं है—

मन्त्री—हे नरनाथ ! यह बात यथार्थ है परसों जब हम महेन्द्रनाथ महादेव जी का दर्शन करके प्रत्यागमन हुए तब देखा कि कुमार एकान्त में नयन युगल मुद्रित करके बैठे रहे जैसे कोई योगी ऋषि ध्यान निमग्न वा समाधि ग्रस्त हो ।

सदानन्द—हे भूपति ! श्मशान का दृश्य देखने से पुराणादि धर्मशास्त्र की कथा सुनने से एवं स्त्री सहवास करणान्तर कभी २ किसी २ को मन में वैराग्य आ जाता है परन्तु इसके निमित्त किसी प्रकार की चिन्ता करने का कारण नहीं है ।

राजा—हे वयस्य ! कहिए मेरा एक मात्र पुत्र हमारा व पूर्व पुरुषगण का केवल मात्र जलपिण्डस्थल संसार त्याग करके साधुवृत्ति अवलम्बन करैगा हमलोगों के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखैगा तब कैसे हमलोग धैर्य्य धारण करके जीयेंगे ।

सदा॰—हे पृथ्वीनाथ ! विपत्ति काल में धैर्यावलम्बनपूर्वक विपतोद्धार का विहित उपाय व यत्न अवश्य कर्तव्य है ।

राजा—हे सखे ! मैंने तो कह दिया कि मैं नाना प्रकार के उपाय व यत्न करके हार गया।

सदा०—नहीं महाराज क्षमा किया जाय मैं कहता हूं कि इसका उपाय करने का यथार्थ चेष्टा व यत्न नहीं हुआ जिस पन्थ अवलम्बन करके चलने से गन्तव्य स्थान में पहुंचा जाता है उसी मार्ग से चलना चाहिए दूसरे राह से जाने में लक्ष्यस्थान कभी नहीं मिलेगा जब वैराग्य आता है तब उसके प्रतिकार के निमित्त रमणी प्रसंग करना चाहिये।

राजा—हे सुहृत् ! इसी कारण मैंने पूर्वही से कुमार के यौवन प्राप्त होने के पहिलेही विवाह कर दिया है अब तो दम्पती को देखने से रति व कन्दर्प के सदृश बोध होता है परन्तु मेरा अभीष्ट सिद्ध कुछ भी नहीं हुआ।

सदा०—हे राजन् ! जब किसी को संसार से वैराग्य होता है तो कामिनी और कांचन के ऊपर श्रद्धाहीन होता है एवं वही दोनों का परित्याग कर देता है इस हेतु से मैं प्रार्थना करता हूं जो किसी तरह से कुमार को रमणी प्रेम से बद्ध करना चाहिए। कामिनी और कांचन मनुष्य गण को संसाररूप कारागार में आबद्ध करने के निमित्त सुदृढ़ शृङ्खल हैं यदि राजादेश हो तो

मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि कुमार का वैराग्य छोड़ाय के राजसमीप में पुनः उपस्थित हूंगा नहीं तो यह मुख और कभी नहीं दिखाऊंगा।

राजा—हे सखे! सब विषय का अग्र पश्चात् विचार करके प्रतिज्ञा करना उचित है एकाएकी विचारशून्य होकर उत्तेजित होना वो अपरिणामदर्शी अविवेकी पुरुष के सदृश प्रतिज्ञा करना ये सब विज्ञता का लक्षण नहीं है।

सदा०—हे कृपानाथ! इस बात को यह किंकर अच्छी तरह से जानता है किसी विषय में बिना पूर्ण विश्वास कोई दृढ़ प्रतिज्ञा नहीं कर सक्ता विशेषतः राजसन्निधान में, हे दीनबन्धो! इस विपत्सिंधु से अति शीघ्रही आप उत्तीर्ण होंगे।

राजा—किस तरह से?

सदा०—हे धीमन्! अशास्त्रीय व युक्तिविहीन परामर्श महाराज को मैं कभी नहीं दे सक्ता हूं जिसकी परीक्षा शास्त्र व पुराणादि धर्मग्रन्थ में अच्छी तरह से हो गया है वही अमोघ उपाय मैं अनुसरण करूंगा। 'महाजनो येन गतः स पन्थाः'।

राजा—हे भूदेव प्रकाश कीजिये कौन उपाय अवलम्बन करके आप कुमार को संसारीय वा गृहासक्त करेंगे।

सदा०—हे शाक्यकुल नाथ! यह सब बात आप को भी विशेष रूप से विदित है परन्तु कार्य समय में कारण

नहीं होता है मैं स्मरण कराय देता हूं । प्रजापति दक्ष महाराज के गृह में जब कैलाशबासिनी हर सीमन्तिनी दाक्षायणी सती ने पतिनिन्दा सुन कर प्राण त्याग किया था तब महायोगी महेश्वर चन्द्रशेखर ने संसार शून्य देखा वो अति कठोर वैराग्य बश होकर एकान्त में हिमालय शिखर के प्रान्त भाग में तप करने बैठे इन्द्र चन्द्र ब्रह्मादि देवगण में किसी को सामर्थ्य नहीं हुआ जो परम योगीश्वर का योग भंग करै ध्यान भंग करना तो दूर है किसी ने उनके निकट जाने का भी साहस नहीं किया ।

राजा—हां यह तो ठीक है तब—

सदा०—तब अन्त में देवगण ने परामर्श करके मदन द्वारा हरध्यान का भंग किया था ।

मन्त्री—हे ब्राह्मण देवता यहां आप को रतिपति कन्दर्प कहां मिलैगा अब तो अनंग के शरीर का चिन्ह मात्र भी नहीं रह गया ।

सदा०—हे अमात्य सुनिये, जो त्रेता युग में लोमपाद राजा के राज्य में द्वादश वर्ष कालव्यापी अति भीषण अनाहृष्टि हुई थी राज्य समेत प्रजाकुल निर्मूल होने का जब सूत्रपात हुआ था तब किसी ने व्यवस्था दिया कि जो महामुनि विभाण्डकतनय कुमार ऋष्यशृङ्ग को राज्य

में लाकर यज्ञ कराने से अति शीघ्र पर्जन्य देव प्रसन्न होकर जीवगण को जीवनरूपी अति शीतल वारि व-र्षण करेंगे जो ऋष्य शृङ्ग ने महाराज दशरथ के गृह में पुत्रेष्टि यज्ञ करके स्वयं भगवान को पुत्ररूप से आवि-र्भूत किया था परन्तु विभाण्डक मुनि को ऋष्य शृंग प्राणतुल्य रहे उनको विभाण्डक मुनि से विच्छिन्न कर के ले आना अति कठिन कार्य रहा अन्त में वेश्यागण जिस प्रकार कौशलजाल विस्तार करके उनको राज्य में ले आईं थी सो सब महाराज को अच्छी तरह से विदित है।

राजा—हां सखे यह सब विषय मैंने रामायण में देखा है परन्तु इससे क्या होगा—

सदा०—इससे महाराज वही सब बात होगी इस कार्य्य को अति तुच्छ वेश्या से मैं उद्धार करूंगा हे पृथ्वीनाथ आप निश्चिन्त हो रहिये महाराज की राजसभा में जो नूतन युवती नृत्यकी हैं किसी २ उत्सव में वो सब आ कर नृत्यगीतादिक किया करती हैं उन्हीं सब वारांगना द्वारा मैं कुमार का वैराग्य छोड़ाऊंगा।

राजा—हे सखे! येन तेन प्रकारेण यदि इस कार्य्य का उ-द्धार हो अर्थात् कुमार को संसाराश्रम में लिप्त करना

आपका किया हो तो आप के इस परम उपकार का प्रत्युपकार मैं अवश्य करूंगा।

सदा०—हे धर्मावतार! किसी प्रकार के लोभ से वा प्रत्युपकार प्राप्ति के भरोसे से मैं इस कार्य्य के सम्पादन करने के निमित्त उत्साही नहीं हुआ हूं परन्तु जब महाराज के अन्न से हमारा यह शरीर है महाराज हमारे अन्नदाता हैं तब पालनकर्त्ता के उपकार के हेतु प्राण समर्पण करना अवश्य उचित है हे धरणीपति आजही मैं इस कार्य्य करने के निमित्त नर्तकीगण के साथ इसका परामर्श करूंगा।

राजा—अच्छी बात है किसी वार्त्तावाहक को कह दिया जाय कि नर्तकीगण को बुलाय लावै।

सदा०—नहीं महाराज दूसरे किसी वार्तावाहक के प्रेरण करने की आवश्यकता नहीं है इस कार्य करने के निमित्त मैं स्वयं जाऊंगा गंगाजी को लाने के लिये भगीरथही गये थे—

राजा हे सखे! आज आपका वचन सुन कर व आग्रह देख कर मेरा हृदय आश्चर्य्य हो गया आप धन्य हैं। परन्तु एक बात यही है कि पतितपावनी सुरतरंगिणी जान्हवी को सूर्य्यवंशावतंस श्रीमान् भगीरथ इस मर्त्य-धाम में ले आये इसका कारण अपने पितृकुल के उद्धार

साधन करने के निमित्त। हे वयस्य आप भी उसी तरह अपने पितृकुल का उद्धार करेंगे ?

सदा०—हे महाराज शास्त्र में लिखा है कि "अन्नदाता भयत्राता यस्य कन्या विवाहिता" ये सब पितृस्थानीय देखा जाय यदि प्रथम उक्त पितृकुल का उद्धार साधन हमारा किया हुआ हो।

मन्त्री—हे सदानन्द जी अच्छा आपही जाइये जिससे कार्योद्धार हो कीजिये।

सदा०—मैं अभी जाता हूँ हे महाराज मैं अभिवादन करता हूं। (महाराज को अभिवादन कर के सदानन्द का प्रस्थान)

राजा—अब इस समय सभा का समाप्त किया जाय।

महाराज का प्रस्थान।

पटक्षेपण।

द्वितीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु प्रमोदकानन का द्वारदेश, पार्श्व में एक जराजीर्ण लोलचर्म शिथिलग्रन्थि कुब्जकाय वृद्ध यष्टि अवलम्बन पूर्वक कम्पित कलेवर में अवस्थित।

सिद्धार्थ व सारथी का प्रवेश ।

सा०—हे आयुष्मन् चलिये प्रमोद कानन के भीतर चलिये द्वारदेश में दण्डायमान होकर निर्निमेष नेत्र से आप क्या देखते हैं ?

सि०—(अंगुलीयनिर्देशपूर्वक जराग्रस्त को लक्ष्य कर के) हे सारथे यह मनुष्य इतना दुर्बल व क्षीणकाय क्यों है? देखिये इसके शरीर का चर्म मांस स्नायु सब शुष्क हो गया इसका केश शुक्ल दन्त विगलित व सबल सीधा शरीर जो रहा वह वक्र हो गया और बहुकष्ट से लाठी के ऊपर अपने शरीर का भार रख कर के तब चलता है इसका कारण क्या ?

सा०—हे राजकुमार काल प्राप्त होकर यह मनुष्य जराभिभूत हो गया है इस हेतु जराग्रस्त होने से इसका शरीर इतना क्षीण व बलवीर्यहीन हो गया है किसी कार्यक्षम नहीं है यह अवस्था देख कर इसके बन्धु बान्धव आत्मीय स्वजन इष्ट मित्र जो हैं उन लोगों ने भी इसका संग त्याग कर दिया है ।

सि०—(चकित होकर) क्या सारथे यही इसका कुलधर्म है या कोई राजधर्म है ? कहिये इसके कुल में जो कोई जन्म ग्रहण करता है उसका परिणाम व चरम दशा इसी प्रकार का शोकावह होता है ?

सारथे—हे धर्म्मावतार यह इसका कुलधर्म वा राजधर्म नहीं है ।

सि०—तब ?

सा०—यह संसार का स्वतसिद्ध व अपरिवर्तनीय नियम है वार्द्धक्यदशा में जरा प्राप्त होना यह जगत् का धर्म है इसका व्यतिक्रम नहीं हो सक्ता दीर्घकाल जो कोई संसार में जीता रहता है, वृद्धदशा में वह निस्सन्देह जराकष्ट से आक्रान्त होगा ।

सि०—क्या सारथे सब कोई ?

सा०—सब कोई, हे धरणीपते यौवन अवस्था में जो शरीर इतना सबल स्वस्थ व सुन्दर रहता है यौवनान्त में वह श्रीहीन हो जाता है ।

सि०—हे सारथे बस अब मैं प्रमोदकानन के भीतर नहीं चलूंगा ।

सा०—हे सुकुमारमते अकस्मात् भवदीय चित्त में इस प्रकार का भावान्तर क्यों उपस्थित हुआ ? मैंने तो कोई अपराध नहीं किया ?

सि०—नहीं अमात्य आप का कोई अपराध नहीं है हम जरा का विषय शोच कर क्लिष्ट व व्यथित हो गये ।

सा०—हे देव इसका अनुशोचना क्या ? देखिये प्रबलप्रताप महाराज हैं, आप हैं, हम हैं, आप के इष्ट मित्र जो कोई हैं, सब की यही दशा है संसार में जो कोई जन्म

ग्रहण करता है व अधिक दिन जीवित रहता है वह वृद्धदशा में निश्चित जरा को प्राप्त होता है जरा से कभी कोई नहीं बच सकता है इस निमित्त अधिक चिन्ताकुल होना विफल है।

सि०—हे सारथे आज मैं और प्रमोदकानन के भीतर नहीं जाऊंगा चलिये प्रतिनिवृत्त होइये। मेरा हृदय आज नितान्त विकल व भग्न हो गया है। धिक् सारथे यौवनमदान्ध असार अबोध मनुष्यगण को शत बार धिक् है यौवनमद में उन्मत्त होकर हमलोग नहीं देखते हैं कि जरा हमलोगों को आक्रमण करने के निमित्त सर्वथा प्रस्तुत है जब हमलोग जरा के संपूर्ण अधीन हैं तब किस सुख के हेतु आमोद उत्सव क्रीड़ा कौतुकादि में अनुलिप्त रहें चलिये सारथे चलिये और नहीं, चलिये।

(सिद्धार्थ व सारथी का प्रस्थान)

पटपरिवर्तन।

द्वितीय अङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु राजपथसन्निहित विपणि. निराश्रय अवस्था में एक रोगी भूमिशय्या पर पतित विवर्णमूर्त्ति विकटदेह

बेकल इन्द्रियउत्थानशक्तिरहित जिसका अतिकष्ट से श्वास चलता है अपने मलमूत्र से संलिप्त है ।

सिद्धार्थ व सारथी का प्रवेश ।

सि०—(अंगुलिनिर्देशपूर्वक रोगी को देखाय के) हे सारथे यह क्या यह मनुष्य इस दुर्दशा में क्यों पड़ा है देखिये देखिये इसका शरीर तो देखिये, इसकी मूर्त्ति अतिविवर्ण शरीरविकट व भयावह इन्द्रिय सकल विकल व शिथिल हो गया है उत्थानशक्तिविहीन अपना मलमूत्र जो त्याग किया है वह इसके सर्व शरीर में लिप्त हो गया है इसमें हजारों कृमि रेंगते हैं, इसको यह दशा देख कर मेरे शरीर में रोमांच हो गया है कहिये यह पुरुष कौन है ?

सा० - हे महाभाग । यह ग्लानियुक्त मनुष्य व्याधिग्रस्त हो गया है। इसका बलवीर्य तेज शक्ति सब नष्ट हो गया है इसके आरोग्य होने की सम्भावना नहीं है अतिकष्ट से जो इसका श्वास चलता है सो इसमें कारण यह है कि मृत्युकाल समीप है –

सि० - क्या सारथे ! जैसे काल प्राप्त होने से जराजीवगण को आक्रमण करती है ऐसीही व्याधि भी मनुष्यगण को बिकलेन्द्रिय व बलवीर्यरहित कर देती है । इस प्रकार का कष्टदायक व्याधि सब को होता है, जैसे

जीवगण को वृद्धावस्था में जरा प्राप्त होती है वैसेही रोग-भोग करना पड़ता है ?

सा०—नहीं देव रोगभोग का कुछ ठिकाना नहीं है जिस दिन संसार में जन्म होता है उसी दिन से जब तक कि मृत्यु न हो तबतक रोगभोग करने की आशङ्का मनुष्यगण को सर्वथा लगी रहती है. किसी महात्मा ने कहा है "शरीरम्व्याधिमन्दिरम्" और आप ने जो पूछा इस प्रकार की व्याधि सो व्याधि सब एकही प्रकार के नहीं होते अति असहनीय क्लेशकर नाना प्रकार के व्याधि मानव शरीर को क्लेशित कर देते हैं बालक वृद्ध युवा सब का देह. नाश कर देता है।

सि०—हे सारथे! आप का वचन सुन कर मेरा हृदय आज उद्यमरहित व अशान्तिमय हो गया है व्याधिजन्यक्लेश देख कर आज मैं आत्मज्ञान परिशून्य हो गया हूं।

पटपरिवर्त्तन।

द्वितीय अङ्क।

तृतीय गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु श्मशानसन्निहित राजपथ।

मंचोपरि एक शव लेकर चारि जन मनुष्य का प्रवेश व

तत्पश्चात् शवदाहोपयोगी द्रव्य संभार लेकर कतिपय मनुष्यों का प्रवेश। वाहक चतुष्टय। रामनाम सत्य है।

पश्चाद्वर्ती मनुष्य गण। रामनाम सत्य है।

(सिद्धार्थ व सारथी का प्रवेश)

सि०—(शवप्रति अंगुलिनिर्द्देशपूर्वक) क्या सारथे यह क्या है! मंचोपरि शयन करा कर ये मनुष्यगण इसको क्यों ले जाते हैं! और पश्चाद्गामी मनुष्यगण में कोई कोई रोदन करते हुए जाते हैं ये लोग कौन हैं और कहां जाते हैं?

(शववाहक व पश्चाद्वर्त्ती मनुष्यगण का प्रस्थान)

सा०—हे सुकुमारमते सुशील युवराज मंचोपरि जो शयान है वह जीवित नहीं है उसके अनित्य शरीर में जो नित्य परमात्मा व जीवनशक्ति रही वह अब नहीं है, वह उसके देहरूप आधार को छोड़ कर चला गया है इस कारण से उसके इष्ट मित्र सब शोकाभिभूत होकर रोते हुए चले आते हैं उसके नश्वर शरीर को दाहकार्यादि करने के निमित्त श्मशान में ले जाते हैं।

सि०—हे अमात्य जिस जीवनशक्ति के बल से हमलोग चलते फिरते हैं व हास्य कौतुक वाक्य उच्चारणादि किया करते हैं वह इसके शरीर से बहिर्गत हो गया है। हे विज्ञ यह क्यों निर्गत हो गया? अच्छा जब वह शक्ति चली गई तब कब पुनः प्रत्यागत्त होगी?

सा०—हे अनघ! उसका प्राण अब पुनः इस देह में नहीं आवेगा जो मर गया वह सब दिन के लिये मर गया संसार में जो कोई जन्म धारण करता है वह अवश्य मृत्यु के अधीन रहता है मृत्यु का कोई निर्दिष्ट समय नहीं है। बालक युवा वृद्ध सब का ग्रास करने के लिये कालरूप महाकालकराल मुखव्यादन कर के बैठा है संसारस्थजीवमण्डलों को संहार करने के निमित्त सर्वदा प्रस्तुत है यह काल किसी को छोड़नेवाला नहीं है।

सि०—क्या सारथे! ऐसा हमलोगों के लिये मृत्यु अनिवार्य है किसी तरह से इसके करालकवल से कोई नहीं बच सक्ता! अहो हमलोग कैसे ज्ञानशून्य व अन्ध हैं! जिस शरीर को दुःख देने के निमित्त जरा व व्याधि सर्वदा प्रस्तुत हैं जिस क्षणभंगुर भौतिक देह का नाश करने के लिये मृत्यु हमलोगों का केशाकर्षण कर के बैठा है किस क्षण में ले चलेगा इस शरीर के ऊपर इतना विश्वास कर के जैसा अजर अमर व बराबर नीरोग रहेगा इस प्रतीति से निश्चिन्त होकर अपने भोग विलास में दिन रात मत्त रहते हैं! हे सारथे! इस क्षणविध्वन्सी शरीरधारण का उद्देश क्या? जन्म ग्रहण करना भोजन करना निद्रित होना पशुवत् इन्द्रिय सुख भोग करना नाना विध कष्टकर व्याधिजन्य क्लेश भोग करना और मर जाना यही सब मानवजीवन का मुख्य प्रयोजन है

चलिये सारथे चलिये ! अब हम यहां नहीं रहेंगे मेरा चित्त व इन्द्रिय सकल बिफल हो गया ।

सा०—हे परिणामचिन्तामग्न शाक्यकुलसिंह ! जराव्याधि व मृत्युभय से शोकाकुल व भग्नहृदय होना बिफल है क्योंकि यह सब सर्वजनाधिगत अपरिवर्तनीय नियत फल है जीवमात्र की दशा एकही प्रकार है यह सब देख कर अनुशोचना कर कर के आप क्या करेंगे इस अवस्था में बिशेषत: आप की यौवनावस्था का आरम्भ भी अभी तक पूर्णरूप नहीं हुआ इस अवस्था में आप का इस प्रकार चिन्ता ऐसे जटिलभावना को हृदय में स्थान देना अनुचित है आप राजकुमार हैं आप को राजपुत्रोचित महत्कार्य कर्तव्य है पूर्व जन्म के बहु तपस्या के पुण्यफल से राजगद्दी मिलती है इसका सद्व्यवहार करना चाहिये जराव्याधि व मृत्युभय संसार में सर्वदा सब को क्लेश देता है यह सब अनर्थकचिन्ता आप को नहीं करनी चाहिये अपना शरीर जिसमें प्रसन्न रहे उपस्थित आप को यही कर्तव्य है चलिये अब यहां ठीक नहीं ।

सिद्धार्थ व सारथी का प्रस्थान ।

पटक्षेपण ।



तृतीय अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

कपिलवस्तु प्रमोदकानन अभ्यन्तरस्थ अट्टालिका
एकान्त में सिद्धार्थ व गोपा आसीन ।

गो०—(एक मुद्रित कमल हस्त में लेकर) हे प्राणेश्वर देखिये कमलिनी व भ्रमर का अद्भुत प्रणय देखिये? दिन को इसके प्रणयी इस पद्मिनी का मधुपान करने के निमित्त आया रहा प्रणयिनी कमलिनी भी अपने नागर को प्राप्त होकर हृदयद्वारउद्घाटन कर के उनको बैठाये रही व बड़े प्रेम से मधुपान कराना शुरू की थी परन्तु जब देखा कि दिनमणि अस्तगामी होता है भ्रमर भी उड़कर स्थानान्तर में चला जायगा इस विरहाशंका से अपने प्रणयी को अवरुद्ध करने के निमित्त पद्मिनी ने विकसित हृदयद्वार बन्द कर लिया जिससे अपना कान्त समस्त रात्रि एकान्त में रह जाय भ्रमर का भी अकपट प्रणय देखिये कि जिन्होंने कैसे कठिन से भी कठिनतर काष्ट शकलच्छेद किया करते हैं कुछ भी कष्ट का अनुभव नहीं करते हैं उनको भी इतने कोमल कमल के दलों को काट कर निकलने की प्रवृत्ति मन में नहीं होती है यही प्रणयी युगल का माधुर्य्य व सदृष्टान्त है ।

चलिये सारथे चलिये ! अब हम यहां नहीं रहेंगे मेरा चित्त व इन्द्रिय सकल विकल हो गया।

सा०—हे परिणामचिन्तामग्न शाक्यकुलसिंह ! जराव्याधि व मृत्युभय से शोकाकुल व भग्नहृदय होना विफल है क्योंकि यह सब सर्वजनाधिगत अपरिवर्तनीय नियत फल है जीवमात्र की दशा एकही प्रकार है यह सब देख कर अनुशोचना कर कर के आप क्या करेंगे इस अवस्था में विशेषत: आप को यौवनावस्था का आरम्भ भी अभी तक पूर्णरूप नहीं हुआ इस अवस्था में आप का इस प्रकार चिन्ता ऐसे जटिलभावना को हृदय में स्थान देना अनुचित है आप राजकुमार हैं आप को राजपुत्रोचित महत्कार्य कर्तव्य है पूर्व जन्म के बहु तपस्या के पुण्यफल से राजगद्दी मिलती है इसका सद्व्यवहार करना चाहिये जराव्याधि व मृत्युभय संसार में सर्वदा सब को क्लेश देता है यह सब अनर्थकचिन्ता आप को नहीं करनी चाहिये अपना शरीर जिसमें प्रसन्न रहे उपस्थित आप को यही कर्तव्य है चलिये अब यहां ठीक नहीं।

सिद्धार्थ व सारथी का प्रस्थान ।

पटक्षेपण ।



तृतीय अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

कपिलवस्तु प्रमोदकानन अभ्यन्तरस्थ अट्टालिका
एकान्त में सिद्धार्थ व गोपा आसीन ।

गो०—(एक मुद्रित कमल हस्त में लेकर) हे प्राणेश्वर देखिये कमलिनी व भ्रमर का अद्भुत प्रणय देखिये? दिन को इसके प्रणयी इस पद्मिनी का मधुपान करने के निमित्त आया रहा प्रणयिनी कमलिनी भी अपने नागर को प्राप्त होकर हृदयद्वारउद्घाटन कर के उनको बैठाये रही व बड़े प्रेम से मधुपान कराना शुरू की थी परन्तु जब देखा कि दिनमणि अस्तगामी होता है भ्रमर भी उड़कर स्थानान्तर में चला जायगा इस विरहाशंका से अपने प्रणयी को अवरुद्ध करने के निमित्त पद्मिनी ने विकसित हृदयद्वार बन्द कर लिया जिससे अपना कान्त समस्त रात्रि एकान्त में रह जाय भ्रमर का भी अकपट प्रणय देखिये कि जिन्होंने कैसे कठिन से भी कठिनतर काष्ट शकलच्छेद किया करते हैं कुछ भी कष्ट का अनुभव नहीं करते हैं उनको भी इतने कोमल कमल के दलों को काट कर निकलने की प्रवृत्ति मन में नहीं होती है यही प्रणयी युगल का माहात्म्य व सुदृष्टान्त है ।

सि०—हे प्रियतमे यह इसका दृष्टान्त है यह बात ठीक है परन्तु स्त्री जाति इतनी चतुरा होती हैं सहस्र योजन अन्तर से जब सहस्र रश्मि कमलिनी नायक दिवाकर इन दोनों का व्यवहार देखते रहे तब उस समय में भ्रमर भी मधुपान में उन्मत्त व कमलिनी भी मधुदान में आत्मज्ञान परिशून्य रहती है इस अवस्था में ध्वान्तारि जो ऐसी तीक्ष्ण दृष्टि से यह सब क्रीड़ा कौतुक देखते हैं यह भावना इन दोनों में किसी को नहीं रहती है अन्त में जब देखते २ दिवाकर का शरीर क्रोध से आरक्त वर्ण होकर जैसे यह कुत्सित लज्जा कर दृश्य और नहीं देखेंगे इसी कारण से पश्चिमगिरि का शृङ्गावलम्बन किया करते हैं उस समय में पद्मिनी भी दिनपति का वह भाव देख कर भयभीता व मलिना हो जाती हैं व लज्जा से कमलदल मुद्रित कर देती है जैसे भ्रमर को प्रच्छन्नभाव से गुप्त करने के लिये यही इसका यथार्थ तात्पर्य है।

गो०—हे मेरे हृदयदेवता यह वार्त्ता आप का कहना यथार्थ है क्योंकि आप मेरे एकान्त अनुकूल कान्त हैं अपनी पत्नी छोड़ कर परदाररतपति संसार में असंख्य हैं आप ऐसे नहीं हैं परदार गमन करना तो बड़ी दूर की बात है आप कभी इसकी कल्पना को भी हृदय में

स्थान नहीं देत आपका गुण व मोहनमूर्त्ति मेरे हृदय में सर्वदा बिराजित रहती है पूर्व जन्म के पुण्यफल से व बड़े भाग्य से आप की सदृस पुण्यमय राजकुमार को मैं प्राप्त होकर धन्य हुई। हे नाथ! मैं कुल स्त्री हुई आप के चरणसेवाभिन्न मेरा और कोई दूसरा धर्म नहीं है आप के सुख मे मेरे सुख व आप के दुःख मे मुझ को अतिदुःख होता है आपका शरीर जब प्रसन्न व मन अतिप्रफुल्लित दर्शन करती हूं तब मुझ को आनन्द रखने का स्थान नहीं मिलता और जब आप को चिन्तामग्न विषण्ण उदास देखती हूं तब मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है हे नाथ मैं आप की दासी हूं।

सि० हे पतिरते, पतिव्रता साध्वी का यही धर्म है जो रमणी अपने पति की सेवा छोड़ कर पति की उपेक्षा कर के दूसरे किसी व्रतादिद्वारा शरीर क्लिष्ट किया करती है वह व्रतधारिणी बुद्धिहीना रमणी को इससे कुछ भी पुण्य नहीं होता है परन्तु पतिसेवा में औदास्य हेतु अपने कर्तव्य कार्य में त्रुटि होने से उनको महापाप सञ्चय होता है।

गो०—हे कान्त नितान्त व्यथित होकर मैं कहती हूं पति को भी तो चाहिए ऐसी पतिपरायणासाध्वी रमणी के ऊपर अनुराग प्रकाश करना हृदय से प्रेम करना व उनके ऊपर स्नेह ममता रखना यह भी तो पति का अवश्य कर्तव्य है।

सि०—नहीं मुग्धे यह बात नहीं है पति पत्नी के ऊपर प्रेम करेगा तब पत्नी स्वामी की सेवा करेगी व पतिपरायणा होगी यह पतिव्रता का धर्म नहीं है। पति पत्नी के ऊपर प्रेम करे या न करे प्रीति देखावे या न देखावे किसी प्रकार की हानि लाभ इसमें नहीं है परन्तु पत्नी को चाहिए कि पति के ऊपर अकपट स्वार्थ रहित प्रेम करना, पति पत्नी के ऊपर प्रेम किया और पत्नी भी अपने स्वामी के ऊपर अनुराग प्रकाश किया इसमें सुख क्या? यह तो सामान्य पार्थिव सुख है, देना और उसका बदल लेना इस प्रेम का तो कुछ भी मूल्य नहीं है व प्रेम स्वार्थ पूर्ण है यथार्थ प्रेम ऐसाही होना चाहिए जिसका बिनिमय कुछ न प्रार्थना करना निःस्वार्थ अकपट स्वर्गीय प्रेम उसी को मैं कहता हूं कि जो लोग किसी लालसा से किसी प्रकार की आकांक्षा से प्रेम नहीं करते हैं। जिसका प्रेम करना प्रीति करना अपने हृदय से करना प्रेम कर के अपने मन में सुखी होना जिसके ऊपर प्रेम करना आशक्त होना यह न देखना चाहिए जो जिसके ऊपर आशक्ति है वह मेरे ऊपर आशक्त है या नहीं इसका कुछ भी भावना न करना चाहिए इस प्रकार का प्रेम यथार्थ है इस संसार में जिसका मूल्य नहीं हो सकता।

गो०—हे आर्यपुत्र कार्य देख कर व आप का सारगर्भित वाक्य सुन कर आप को साधारण मन से नहीं बोध होता है, मैं————

(सुकेशी नाम्नी दासी का प्रवेश)

सु०—हे युवराज! मैं अभिवादन करती हूं मेरा प्रणाम ग्रहण कीजिये।

सि०—हे किंकरि कहो किस अभिप्राय से यहां तू आई है? किसका संदेश लेकर?

सु० हे राजकुमार! कृपा करके मेरा अपराध क्षमा कीजिये जब आप एकान्त में रमणी संग रसरंग में बैठे हैं तब इस समय में मेरा यहां आना सर्वथा अनुचित है परन्तु हे सुकुमारमति महाराज बहादुर का प्रिय वयस्य स्वयं सदानन्द राजकीय सन्देशवाहक होकर द्वारदेश में दण्डायमान है और कहता है कि श्रीकुमार को मेरी आगमनवार्त्ता व आशीर्वाद जनाय दो महाराज का कुछ विशेष आदेश लेकर आया हूं इस कारण से मैं आपका प्रिय प्रसंग में विघ्न कर के अपराधिनी हुई।

गो० क्या सखी माननीय सदानन्द महोदय राजसन्देश लेकर आये हैं, इस रात्रि समय में क्यों आये?

सु०—हे देवि यह मैं नहीं कह सकती हूं जैसी अनुमति हो।

सि०—कुछ हानि नहीं है, तुम अभी जाकर उनको मेरा प्रणाम कह दो और उनको सादर हमारे पास ले आओ।

सु०—जो आज्ञा युवराज की।

सुकेशी का प्रस्थान।

सि०—हे कल्याणि तुम उस गृह के भीतर जाकर बैठो मैं महाराज प्रेरित सदानन्द से पिता का आदेश सुन लूं।

गो०—जैसा अभिप्राय हो दासो के ऊपर कृपा रहे यही प्रार्थना है (पद प्रान्त में पतिता)।

सि० (गोपा का बाहु युगल धारण कर के उठाना) हे भयभीति क्यों बिचलित होती हो जाइये सदानन्द अब आया चाहते हैं, उनको बिदा कर के अभी तुमको बुला लेंगे।

(आलिङ्गन) गोपा का प्रस्थान।

सि०—(स्वगत) इस रात्रि समय में पिता जो ने और किसी को न भेज कर अपने प्रिय वयस्य सदानन्द को क्यों हमारे यहां प्रेरण किया, होगा कुछ विशेष कारण होगा।

सदानन्द का प्रवेश।

स०—आयुष्मन् युवराज जयोस्तु, जयोस्तु शाक्यकुलानां येषां पक्षे सदानन्दः।

सि०—हे पितृवयस्य ! मेरा प्रणाम ग्रहण कीजिये कहिये मेरे पूजनीय पिता का सर्वाङ्गीण कुशल है ?

स०—हे धीमन् सब कुशल है और आप चाहो तो इस कुशल से दूना तिगुना चौगुना कुशल हो जायगा ।

सि०—यह कैसा, विशेष प्रकाश करके कहिये ।

स०—हे राजकुमार ! आप राजपुत्र हैं, राजपुत्र को चाहिये कि राजपुत्रोचित चलना, राजपुत्रोचित कार्य करना जिसमें हमारे ऐसे दश उदरदास ब्राह्मण का भी उपाय हो जाय और दस बीस रंडियों का भी प्रतिपालन हो जाय क्योंकि सब का आप से आशा भरोसा लगा रहता है यह सब राजसिक धर्म है यह न करने से संसार में विशेष निन्दा होती है यह मर्त्यधाम जो है सो भोग करने का स्थान है दिन रात मौज से आनन्द करना सुख भोग करना इत्यादि ।

सि०—हे महाभाग आपने यथार्थ कहा, संसार में सुख करना व आनन्द रहना चाहिये परन्तु प्रकृत सुख मिलना भी तो बहुत कठिन है और सुख अपने २ मन के अधीन है सुख किसी को कोई नहीं दे सकता । कोई सुरापान करके सुखी होता है कोई कामातुर परदार से अधिक सुखानुभव करता है कोई स्वार्थ पर पाखण्ड ने परस्व अपहरण करके परम सुख बोध क-

रता है एवं कोई कोई महात्मा एकान्त में बैठ कर भगवान पर ध्यान लगा कर सुखानुभव करते हैं परन्तु एकही पर सब प्रकार का सुख नहीं होता है। जाने दीजिये यह प्रसंग इस समय का नहीं है। महाराज का कौन विशेष आदेश लेकर आप हमारे यहां कष्ट स्वीकार करके आये हैं वह आदेश प्रकाश कीजिये।

स०—हे सुशील युवराज ! महाराज आप का वैराग्य व उदास भाव देख कर अति मर्माहत व यत्परोनास्ति दुखी रहते हैं। सत्पुत्र को अवश्य कर्तव्य है कि पिता माता को सुखी करना व सर्वतोभाव से उनका आदेश पालन करना।

सि०—हे ब्राह्मणदेवता मैं ने कदापि ऐसा कार्य नहीं किया जिससे पिता माता के हृदय में दुःख व किसी प्रकार का क्लेश उपस्थित हो "जननीजन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" और पिता जो साक्षात् देवतास्वरूप—

स०—नहीं नहीं कुमार यह बात नहीं है, मैं अच्छी तरह से जानता हूं आपका स्वभाव अति निर्मल व पवित्र है आज महाराज की जो आज्ञा लेकर हम यहां आये हैं वह आदेश आपको पालन करना चाहिए।

सि०—हे भूदेव ! कहिये महाराज का आदेश मेरा शिरोधार्य है प्रथम देखिये प्रत्यक्ष देवतास्वरूप परमपूजनीय

पित्रादेश द्वितीयतः राजादेश "सर्वदेवमयो राजा" यह आदेश अविचार्यभाव में पालन करना मुझ को अवश्य कर्त्तव्य है, कहिये।

स०—हे राजकुलतिलक! महाराज ने यही आदेश किया है कि आज शाक्यकुल के प्रथा से हलाकर्षण उत्सव है सर्वत्र जैसा नृत्य गीत आनन्द उत्सव होता है आप के यहां भी नर्तकीगण का नृत्य गीत हो।

सि०· यह अति उत्तम है (स्वगत) पुत्रवत्सल पिता का हृदयभाव अपत्यस्नेह का दुश्छेद्यबन्धन संसार का माया पाश (प्रकाश में) अच्छा वह सब नर्तकी कहां हैं और यहां कब होगा ?

स० अभी, हे राजकुमार यहां अभी होगा मैं रण्डियों को साथ ले आया हूं आप की अनुमति होय तो बुलावें।

सि०—हां बुलाये जांय इसमें क्या।

स०—(आनन्द गद्गदस्वर में) बहुत अच्छा हुजूर बहुत अच्छा (उच्चस्वर मे) ए रम्भा चम्पा चमेली बेला आओ जल्दी आओ आज तुम लोगों का नसीब खुल गया जल्दी आओ (नेपथ्य मे नर्तकीगण) क्या सदानन्द महाराज आवें हमलोग भीतर आवें।

स०—अरे आओ आओ गाती हुई चली आओ (राजपुत्र को) हे कुमार आज बड़ा आनन्द होगा।

[रम्भा चम्पा चमेली व बेला का प्रवेश] नृत्यगीत।

स०—हे कुमार (नर्तकीगण की निर्देशपूर्वक) चम्पा चमेली व बेला यह तो सब फूल हैं जब प्रस्फुटित होती हैं तब सुगन्ध से चतुर्दिक् आनन्द कर देती हैं उस समय में इसकी शोभा अच्छी होती है व कार्यउपयोगिनी होती हैं और जब कली रहती है वा सूख जाती है तब कोई नहीं इसका आदर करता और यह रम्भा जो है यह फूल से फल हो गया है यह रंभा देवराज इन्द्र के यहां का रंभा नहीं है बंगदेश में एक प्रकार का रंभा फल होता है बंगवासी उस फल को पक्क व अपक्क सर्वावस्था मे बड़ी प्रीति से खाते हैं यह रंभा वह रंभा भी नहीं है हे कुमार इस रंभा की कदर आदर व मर्यादा बन्दा अच्छी तरह से जानता है।

रं०—हे सदानन्द महाराज बन्दर को अति प्रीति रंभाही से होती है यह बात कुछ विचित्र नहीं है।

सि०—हे भूदेव। अब रात्रि अधिक हुई और यह लोग भी परिश्रान्त हो गये हैं इस कारण से मैं कहता हूं यदि आप की अनुमति हो तो इन सबों के विश्राम करने के लिये व्यवस्था कर दी जाय।

रं०—नहीं पृथिवीनाथ! हमलोगों को कुछ भी क्लेश नहीं होता है हुजूर के दर्शन से हमलोगों को परम तृप्ति हो गई है।

स०—अच्छा तो आज बन्द कर दिया जाय ।

सि०—(उच्चस्वर से) कोई है ?

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्र० महाराज ।

सि०—(प्रतिहारी से) इन लोगों का सब बन्दोबस्त ठीक कर दो ।

स०—कुछ मिष्टान्न भी मँगाय दिया जाय क्योंकि "मिष्टान्नमितरे जनाः" ।

सि०—(प्रतिहारी को) हां हां कुछ मँगाय दिया जाय ।

प्र०—जो आज्ञा महाराज ।

(प्रतिहारी का प्रस्थान)

सि०—(सदानन्द को) आप लोग भोजन विश्राम कीजिये मैं भी आता हूं ।

(सिद्धार्थ का प्रस्थान)

स०—हे चम्पा देखिये आज रम्भा कैसे ढंग से आई है आज मैंने देखा रम्भा का वेष विन्यास अंग चमत्कार व भाव देख कर कुमार का मन मोहित हो गया है ।

रं०—मैंने देखा बेला भी कुमार के ऊपर कटाक्ष वाण सन्धान किये थी परन्तु कुछ भी फल नहीं हुआ ।

बे०—चमेली का कण्ठस्वर बहुत अच्छा है इनका सुकण्ठ व तान लययुक्त गीत सुन कर कितने महापुरुष इनके

कण्ठ के साथ अपना कण्ठ मिलाने के लिये पागल हो गये हैं।

चं०—सब सत्य है परन्तु हमलोगों को कुछ भी अभीष्ट-सिद्धि नहीं हुई।

स०—होगा होगा घबड़ाओ मत शास्त्र में लिखा है कि—"शनैःपन्थाश्शनैःकन्था शनैः पर्वतलंघनम्" धीरे से होगा सब काम में जल्दी करना अच्छा नहीं, क्यों रम्भा समझी न ?

(एक खँचिया मिष्ठान्न लेकर जनैकवाहक का प्रवेश)

मि०वा०—क्या सदानन्द महाराज आप लोगों के जलपान करने के वास्ते मेवाखाने से मिठाई ले आया हूं कहिये कहां रख दूं ?

स० क्या मिठाई ले आये हो तूं बड़ा बेवकूफ है, पतुरिया कस्बी अस्बी सब यहां बैठी हैं और तूं एकाएकी मिठाई लेकर ब्राह्मणभोजन का द्रव्य लेकर बिछौना छू दिया सब नष्ट कर दिया, तूं कौन जात है ?

मि०वा—मैं नाऊ ठाकुर हूं।

स०—क्या नाऊ हज्जाम ? यह मुझको बिस्वास नहीं होता है नाऊ ऐसा बेवकूफ बेअदब नहीं होता है तूं बड़ा पाजी है

रंभा—क्यों सदानन्द महाराज उसको आप गाली देते हैं

कितने दिन हमलोगों के घर पर जाकर आप ने हम-लोगों के साथ मिठाई खाय। और आज छूने से इतने खफा होते हैं।

(मिष्ठान्नवाहक को) जाओ भैया तुम इसो जगह मिठाई रख कर चले जाओ किसी कहार को सहेज दो कि एक ठिल्ला जल व दो चार पुरवा बाहर में रख दे।

मि०वा०—बहुत अच्छा।

[मिष्ठान्नवाहक का प्रस्थान]

स०—क्या रम्भा तुम लोग तो सब खा के आई हो और रात्रि भी अधिक हो गई इस समय में शर्करासंयुक्त घृत-पक्क गुरुपाक द्रव्य भोजन करना भी उचित नहीं है यह सब मिठाई आज रख दिया जाय कल ठाकुरजी को भोग लगाकर तुम लोगों को प्रसाद में भेज दूँगा।

च०—क्या सदानन्द महाराज ब्राह्मणदेवता यह मिठाई जब हमलोगों से छू गया है तब किस तरह से ठाकुरजी को भोग लगाओगे कल इस बात को मैं महाराज से जरूर कह दूँगी।

स०—नहीं नहीं चमेली यह बात नहीं है मैं झूठ कहता रहा जो ठाकुरजी को भोग लगाऊँगा मेरा मतलब यही है कि इस अधिक रात्रि समय में यह मिठाई न खाया जाय क्योंकि एक दफे तुम सब कोई अपना मा-

मूली खाना खा चुकी हो अब फिर खाओगी तो अ-
जीर्ण हो जायगा आजकल शहर में विशेष हैजा फैला है।

चं०—अच्छी बात है ये सदानन्द आप को जब इतना अ-
जीर्ण का डर है तब आप मत खाइये हम सब तो अ-
वश्यही खाऊँगी लो चमेली अपना भाग ले लो रम्भा
तुम भी लो।

मिठाई बराटन करना:—

स०—अरे तू सब क्या करती हो? महाराज का प्रसाद जब
आ गया है तो मैं भी जरूर खाऊंगा (दो दोना दोनो
तरफ रख कर) हमको भी दो हिस्सा मिलना चाहिए।

च०—दो हिस्सा क्यों? आप अकेले हैं और हिस्सा दो क्यों?

स०—एक हमारा और एक—और एक ठाकुरजी का।

च०—फिर ठाकुरजी का नाम लेते हो महाराज से मैं ज़-
रूर कहूँगी।

स० नहीं नहीं हम भूल गये और एक हमारे घर में के
निमित्त।

रम्भा—अच्छा पहिले आप अपना हिस्सा तो ले लीजिये
उसके बाद फिर देखा जायगा।

(सदानन्द को भी मिष्टान्न प्रदान)

(सब का मिष्टान्नभक्षण)

सदा०—बहुत अच्छी मिठाई है सब आकण्ठ खा लेव कोई
औगुन न करेगा इस प्रकार उपादेव राजभोग मिष्टान्न

एक दिन भोजन करने से द्वादश वर्ष परमायु वृद्धि होती है शास्त्र में लिखा है 'घृतं हि जीवनं'।

रम्भा—क्या सदानन्द महाराज अब तो अजीर्ण व हैजा का कुछ डर नहीं है ?

स०—कुछ नहीं है वह सब कदन्न अहारी पेटू लोगों के निमित्त है।

(मिष्टान्न भोजन समाप्ति कर के सदानन्द कर्तृक पानीपांड़े को बुलाना वो सब का जल पीना)

रम्भा—तब अब क्या होगा।

स०—तुम लोग यहो रहो मैं घर जाता हूँ और सुनो यदि कुमार किसी को भीतर बुलावे तो अवश्य जाना।

रम्भा—अच्छी बात है।

(सदानंद का प्रस्थान)

[सब नर्तकीगणों का शयन करना कुछ देर के बाद निद्राभिभूत होना वो परिधेय वस्त्र सकल शिथिल वो स्थान-च्युत हो जाना, किसी के मुख से लार निर्गत होना किसी की विकट नासिकाध्वनि किसी को भयंकर दन्त निस्वेष शब्द होना इत्यादि अवस्था]

कुमार का प्रवेश।

कुमार—(स्वगत) यह मैं कहां आया, यह श्मशान क्षेत्र या प्रेतभूमि है, नहीं २ यह तो हमारा ही प्रमोदकानन है यही सब बारविलासिनी रमणीगण के सुन्दर

वेष विन्यास कर के वो मोहन अंग चमत्कार के साथ नृत्य गीत करती रहीं अब ये सब किस दशा में देख पड़ती हैं, देखिये इस प्रकार दन्तवहिष्कृत वो मुख व्यादन कर के सोई हुई हैं जो इनको देख कर हमारे हृदय में भय संचार होता है। इस बार नारी को कैसा विकट नासिकाध्वनि हो रहा है यह देखिये इस पिशाची के मुख से कैसी दुर्गन्धयुक्त लार बहती है जिसके निकट जाने में भी अति घृणा होती है और इस राक्षसी के मुख से ऐसी अपान वायु सदृश डकार आती है कि जिसके पुरीष गन्ध नासिका में प्रवेश करने से प्राण बहिर्गत हुआ जाता है, अहो यही सब नरक भोग करने के निमित्त कामकिंकर कामाशक्त व्यभिचारी पाषण्डगण अनुरक्त होते हैं अज्ञानी निर्बोध मनुष्यगण शूकर सदृश इन सब स्वेद मूत्र पुरिषादि अशुचि वस्तु में निमग्न होते हैं विवेक बुद्धिशून्य हो जाते हैं धिक् है! शत बार धिक है! अहो मैं कहां हूँ! नरक! नरक! नरक! अग्निमय रौरव! असिपत्र कुम्भीपाक! अति भयानक कुम्भिपाक नर्क! शरीर दग्ध हो जाता है! भस्म हो रहा है नर्क! नर्क!! नर्क!!!

(द्रुत वेग से प्रस्थान)

पटपरिवर्त्तन।

तृतीय अङ्क ।

द्वितीय गर्भाङ्क ।

कपिलवस्तु राजभवन का सिंहद्वार संमुखस्थ राजपथ, सिद्धार्थ वो सारथी का दण्डायमान ।

काषाय वस्त्र परिहितजनैक भिक्षुक का प्रवेश ।

गीत ।

भि०—अपना काम मत भूलो रे मन । शेष में नहीं पछ-
ताओ जिसमें अभी करो भजन ॥ हाथी चढ़ो घोड़ा
चढ़ो बग्गी चढ़ो रे मन । सब छोड़ के जाना होगा
अतिही शमन ॥ कोई किसी का नहीं है रे मन सुन
मेरा बचन । सबही अन्धेरा हो जाता है जब मुद्रित
नयन ॥ पुत्र कलत्र भ्रम मात्र कहैं सुधीजन । भोजन
का सब भागी केवल पुण्य पाप आपन ॥

सि०—हे सारथे ! अपने प्रेम से मत्त होकर एकाग्र चित्त मे उपदेशपूर्ण भजन गाते हुए काषायवस्त्र परिधान भिक्षापात्र हाथ में लेकर अति धीर निम्नदृष्टि वो मन्थरगति से चला आता है संसार की किसी वस्तु के ऊपर जिसकी दृष्टि नहीं है जिसकी मूर्ति अति शान्त वो चित्त स्थिर बोध होता है जिसके दर्शन से मन में विशेषानन्द अनुभव होता है यह पुरुष कौन है ?

सा०—हे आयुष्मन्! यह मनुष्य भिक्षुक है संसार की कामना वो आशक्ति परित्यागपूर्वक विनीत वो साधुभाव अवलम्बन करके सन्यासधर्म ग्रहण किया है, काम, क्रोध, लोभ, मोहादि रिपुगण को दमन करके भिक्षालब्ध अन्न से शरीर पोषण किया करता है।

सि०—साधु सारथे! आज आप ने मेरे हृदय का वांछित अति उत्तम बात यह कही है। ज्ञानी गण इस प्रकार की परिव्राजक अवस्थाही को मुक्ति का प्रशस्त मार्ग कह के स्वीकार किया है महा-जनों ने कहा इसमें अपने एवं अन्य का भी हित बोध कल्याण साधित होता है जीवात्मा सुखी होता है।

सा०—हे अनघ! 'यादृशीभावनायस्य सिद्धिर्भवतितादृशी' साधन का नाना प्रकार का पन्था है परन्तु लक्ष्य एकही परमात्मा के ऊपर रहता है सच्चिदानन्द ज्योतिःस्वरूप का प्राप्त होना यही मुक्ति का उद्देश्य है।

सि० हे अमात्य जब मुक्तिही प्राप्त होना मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य है तब मुक्ति का यथार्थ मार्ग जिसमें मिल जाय वह उपाय मनुष्य को अवश्य करना चाहिए

सा०—हे कुमार! इस अवस्था में मुक्ति का उपाय चिन्ता करना, इसका मार्ग निर्णय करना आप का काम नहीं है।

सिद्धार्थ—क्यों ?

सा०—इसका कारण है।

सिद्धार्थ—क्या कारण है ?

सा०—कारण यही है जिसमें मनुष्य गण स्वेच्छाचारी न हो इस निमित्त भूत भविष्य वर्तमान त्रिकालज्ञशास्त्रकारगण संसारीय मानवगण के कल्याण के हेतु कतिपय नियम व विधि निर्धारण कर दिया है उस विधि से चलने से संसार में इस काल में सुख भोग होता है, व अन्त में परलोक में सद्गति प्राप्त होती है अधिकार व विधि बहिर्भूत कार्य करना अनुचित है।

सिद्धार्थ—यह कैसे ?

सा० जैसे आप बालक हैं आप को उचित है बालक की बराबर चलना पिता माता की आज्ञा पालन करना गुरु का उपदेश सुन कर ज्ञान उपार्जन करना, यही बालक का धर्म है। यौवन अवस्था में स्त्री पुत्र का पालन करना वृद्ध पिता माता की सेवा करना धनोपार्जन करना एवं आश्रितजनों का रक्षा करना यही यौवनावस्था का नियम है। वृद्धदशा उपस्थित होने से एकान्त में बैठ कर भगवान का आराधन करना अथवा इच्छा होने से वाणप्रस्थ अवलम्बन करना यही शास्त्रीय विधि है।

सि०—हे प्राज्ञ! आप के मुंह से ऐसाही वचन निर्गत होना परिताप की बात है क्योंकि आप ने जब कहा ये जो व्याधि व मृत्यु के अधीन क्षणभंगुर शरीर के ऊपर कुछ भी विश्वास नहीं है तब कैसे यह अमूल्य बाल्य-जीवन व यौवन अवस्था वृथा असार-क्षणिक सुख सं-भोग से अति वाहित करने का उपदेश देते हैं।

सा०—हे सुबोध! यह उपदेश आप का चिरानुगत भृत्य का नहीं है यह वचन शास्त्रकार महा गणों का है।

सि०—जो कुछ हो परन्तु हे मन्त्रिन्! अब मैं अच्छी तरह से समझ गया हूं आज जो शान्त मूर्ति संसारविरागी परमत्यागी साधु पुरुष का दर्शन लाभ किया है उसी से मेरे हृदय का द्वार उद्घाटित हो गया है मन का अन्धकार दूर हो गया है।

सा०—हे सरल हृदय राजकुमार यथार्थ साधुदर्शन से ऐसीही चित्तशुद्धि होती है साधु ही भगवान का स्व-रूप है।

सि०—हे अमात्य! अब मुहूर्तमात्र संसार में रहने का मेरा चित्त उत्साह नहीं करता अब संसार जैसा अति भयंकर बन्धनयुक्त कारागार बोध होता है। इसमें से अब किसी तरह से उद्धार होने का उपाय करना चा-हिए।

सा०—हे कुमार संसार छोड़ कर मुक्तिमार्ग का अनुसन्धान करना किसी काम का नहीं है जो कुछ कर्म है सो सब संसारही में है संसाराश्रम और सब आश्रमों से श्रेष्ठ है सन्यासाश्रम वा बाणप्रस्थ वा अन्य किसी प्रकार का आश्रम हो संसारही सब का उपाय है।

सि०—हे सारथे! और मैं कुछ भी नहीं विचार करूंगा हम संसार त्याग करके मुक्तिपथ का अनुसन्धान करेंगे, चलिये अब राजभवन में ले चलिये अब मैं प्रमोदकानन में नहीं चलूंगा।

सा०—आप का यथाभिरुचि होय।

(उभय का प्रस्थान)

पटक्षेपण।

चतुर्थ अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु राजान्तःपुर सिद्धार्थ व गोपा आसीन।

गो०—हे आर्यपुत्र दिन रात इस प्रकार चिन्तायुक्त रहने से क्या होगा? देखिये शरीर भी आप का दिन पर दिन अति कृश व दुर्बल होता जाता है।

सि०—हे प्रिये तुम मेरी सहधर्मिणी अर्द्धांगभागिनी हो

तुम सामान्य वनिता नहीं हो तब मेरा यही महान व्रत साधन करने में क्यों सहायता नहीं करोगी ?

गो० — हे नाथ ! आप का प्रियकार्य साधन करना आप को प्रसन्न करना व सेवा करना यह दासी का मुख्य कार्य है आपका कार्य छोड़ कर मेरा दूसरा कोई कार्य्य नहीं है।

सि० — हे सरले ! सुनो, अब मैं इस राजप्रासाद के भीतर सुवर्ण पालन पर विश्राम सुख भोग नहीं करूंगा जगन्माता का विशाल क्रोड़देशही अब मेरी सुखशय्या होगी उत्तुङ्ग शैल शृङ्गही अब मेरा उपाधान होगा. असीम नभोमण्डलही मेरा विचित्र चन्द्रातप होगा और प्रकृति राज्य के अनन्त भण्डार से मेरा तृप्तिसाधन होगा जैसे वन का फल मूल कन्द आदि मेरा भोजन द्रव्य होगा. नदी व निर्झर का सुशीतल जल मेरा पानीय होगा समग्र जगत् की नर नारी मेरी भ्राता भगिनी होगी। हे प्रिये जिससे इस जगत् की दुर्दशा मैं दूर कर सकूं यह मैं अवश्य करूंगा यही मेरे जीवन का लक्ष्य है, यह मेरे जन्म का उद्देश्य है, एवं यही मेरा करणीय व्रत है, अब जिससे मैं इसमें सफल मनोरथ होऊं तुमको भी सहायता करनी चाहिए।

गो० — हे नाथ ! हे हृदयवल्लभ ! हे मेरे जीवन सर्वस्व मेरे

स्वप्न का फल इतना शीघ्र देख पड़ा अब मैं क्या करूं हे प्राणपते अब मैं कैसे जीऊंगी कैसे संसार में रहूंगी। यदि तरु आश्रित लता को छिन्न कर दे तो वह लता कैसे जी सकती है ?

सि०—हे प्रिये तुम जो स्वप्न दर्शन किया है वह स्वप्न अमंगलसूचक कुस्वप्न नहीं है वरन अतिविचित्र भविष्यत दैव बाणी स्वरूप है हमलोगों को सावधान कर दिया है एवं जो कार्य करने के निमित्त मेरा जन्म ग्रहण है उस कार्य करने का काल अति निकट हो आया तुम जो स्वप्न में अपना अलंकार छिन्न भिन्न व परिधेय वस्त्र स्खलित देखा है उसका फल तुम्हारी नारी काय परित्यक्त होकर आत्मा के स्वरूप में लीन हो जायगा और तुम जो राजछत्र दण्डादि भग्न व हस्त पदादिदेह से विच्युत देखा है इसका फल तुम अति शीघ्र पाप चतुष्टय से मुक्त हो जाओगी और तुम जो हमारा वसन भूषण उन्मोचित देखा है व मणिमुक्ताहारादि चतुर्दिक् सुविक्षिप्त देखा है इसका फल तुम देखोगी कि मैं इस संसार के पाप ताप का नाश करके ज्ञानसूत्र का उद्धार व संस्कारसाधन करूंगा इसलिये तुमको मैं कहता हूं अब हमारा कार्य करने का शुभ समय उपस्थित हो गया है अब तुम हृदय दृढ़ करके प्रसन्न चित्त से मुझ को इस कार्य में साहाय्य करो।

गो०—हे नाथ ! अब मैं समझ गई हूं आप साधारण मनुष्य नहीं हैं कोई महापुरुष आकर संसार में अवतीर्ण हुआ मैं ज्ञानहीना नारी हूं मोहवश से आप को कर्तव्य-कार्य में प्रतिबन्ध किया आप को बहु प्रकार से क्लेश दिया आप का प्रिय कार्य करने का वा चित्त प्रसन्न करने का सामर्थ्य मुझ को नहीं है अब मैं आप को कुछ नहीं कहूंगी जो आप के मन में आवे कीजिये, केवल मात्र यही इस दासी की प्रार्थना है जहां आप चलेंगे आप की चरण सेवा करने के निमित्त मैं भी आप के साथ चलूंगी ।

सि०—हे प्राणेश्वरि साध्वी सती का यही कार्य है परन्तु मैंने जिस कार्य्य करने के निमित्त संकल्प किया है उस कार्य्य में स्त्रीरहित होकर ब्रह्मचर्य्य अवलम्बन करना चाहिए नहीं तो इसमें कृतकार्य नहीं हो सकते, अब मैं पुत्रवत्सल पिता के पास जाऊंगा पितृ आज्ञा लेकर कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हूंगा क्योंकि बिना पिता के अनुमति ग्रहण हमारा कार्योद्धार नहीं होगा अब मैं जाता हूं ।

गोपा का आलिंगन करके सिद्धार्थ का प्रस्थान ।

पटपरिवर्तन ।



चतुर्थ अङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

कपिलवस्तु राजगृह। राजा शुद्धोदन वो सारथी का प्रवेश

सारथी—हे महाराज जो परमेश्वर का अभिप्राय है वह अवश्य होगा किसी तरह से उसका व्यतिक्रम नहीं हो सका देखिये कुमार को संसाराश्रम में आवद्ध करने के लिये कितना यत्न किया जाता है कैसे २ उत्तम उपाय अवलम्बन किये जाते हैं परन्तु किसी से कुछ भी फल नहीं होता है।

महाराज—हे मंत्रिन् अब तो कोई उपाय बाकी नहीं रहा जिस्से हमारे मन में भरोसा हो।

(सिद्धार्थ का प्रवेश)

सिद्धार्थ—(महाराज को प्रणाम करने के बाद) हे पितः मैं आपका अति अभागा पुत्र हूं अपने २ सुख के निमित्त वो भविष्य में पुत्र से प्रतिपालन होने के भरोसा से सब लोग पुत्रकामना करते हैं परन्तु मैं ऐसा आप का कुपुत्र हुआ जो केवल पिता माता को दिन रात क्लेश देता हूं हे महाराज आप से अति विनय वो मिनती के साथ प्रार्थना करता हूं कि आप के चरण में मैं आज बिदाई ग्रहण करने आया हूं कृपा करके प्रसन्न

चित्त होकर मुझको आशीर्वाद दीजिये कि मेरा मनोरथ सफल होय जिस्से मेरा जन्म धारण करना सार्थक होय।

महाराज--हे वत्स! हे प्राणाधिक पुत्र यही सन्देश सुनाने के निमित्त आज हमारे पास तुम आये हो तुम्हारा यह वाक्य जैसे बासव करच्युत वज्र सदृश हमारा हृदय विदीर्ण करता है, हे नयनानन्द पुत्र वरन बिना जल मत्स्यादि जलचर गण भी जी सक्ते हैं, वरन वृक्षादि उद्भिद्गण को भी शून्य में अवस्थान संभव है परन्तु तुमारे सदृश सुकुमार पुत्र का वदन सुधाकर दर्शन बिना हमारे शरार में प्राण कभी नहीं रह सक्ता कहो किस कारण से तुम पिता माता के मन में ऐसा क्लेश देते हो इस राज्य संसार में तुमको किस बात का अभाव है जिसके लिये तुम सर्वस्व छोड़ के बन में तपस्या करने जाओगे।

सिद्धार्थ—(हाथ जोड़कर) हे पित:! हे देव। मैं चाहता हूं कि जरा हमको आक्रमण न करै मेरा यौवन सदा बना रहै निरुज शरीर हो सर्वदा स्वास्थ्य सुख भोग करूँ एवं अनन्त आयु: प्राप्त होकर सर्वजनाधिगत मृत्यु से बचा रहूं हे तात यदि यह सब मेरे मनोरथ पूर्ण करैं तो अवश्य मैं संसार में रह के आप के इच्छानुरूप कार्य करूँगा।

महा०—हे प्राणाधिक कुमार जरा व्याधि वो अपरिवर्त्तनीय नियती से रक्षा करने की सामर्थ्य हमको नहीं है, कोटि कल्प कालव्यापी तपस्या निरत योगी गण भी इन सभों से नहीं रक्षा पा सके ।

सि०—हे महाराज तब जरा व्याधि प्रपीड़ित वो मृत्युभय समन्वित संसार में आबद्ध होकर किस तरह सुख की आकांक्षा कर सक्ता हूं अनन्त दुःख का भार अपने सिर उठा के क्षण मात्र के सुख के निमित्त आग्रह करने का क्या प्रयोजन है सुख सदृश मृगजल के भ्रम से महद्दुःखरूपी भूमि में उपस्थित होकर दग्ध होने से बचना क्या उचित नहीं है? तब क्यों हमको स्नेहवस होकर मुक्तिमार्ग से च्युत करते हैं तथा सुख प्रलोभ से क्यों हमको अशान्ति में ले जाते हैं अब कृपा करके स्नेह के बन्धन को छिन्न कर दीजिये एवं आशीर्वाद कीजिये जिस्से मैं संसाररूप कारागार से मुक्ति लाभ करूं ।

महा० हे हृदयानन्द हे मेरे वृद्धावस्था के एक मात्र अवलम्बन मेरे अन्ध के नयन खंज का यष्टिरूपी पुत्र हम को और कुछ मत कहो तुमारा मर्मभेदी वचन सुनकर मेरा मस्तक घूम गया बुद्धि स्थिर नहीं है । हे जीवन सर्वस्व तुम क्या कहते हो तुम अभी बालक हो संसार

छोड़ के तपस्या करने चले जाओगे और मैं वृद्ध दशा में सुख संभोग से बैठ के, राज्य भोग करूँगा ? यह हमसे कभी न होगा तुम्हारे अदर्शन से हमारा प्राण क्षण मात्र भी देह में नहीं रहैगा, यदि पितृबध करना तुम्हारे धर्म्म का अंग है तो जो तुमारे मन में आवे करो ।

सि०—हे पित: अपत्य स्नेह ऐसाही संसार का दृढ़ बन्धन है जिसको तोड़ने को सामर्थ्य किसी को नहीं है, परन्तु जब अच्छी तरह से बिचार करके देखा जाय कि कौन किसका पुत्र और कौन किसका पिता है, सब एकही परमात्मा का अंश मात्र माया के कारण से भिन्न २ रूप बोध होता है जब ज्ञान का प्रकाश हृदय में होय और यह सब पृथक् भाव मन में न रहै तब संसार का माया मोह कुछ नहीं कर सक्ता । हे परम ज्ञानी महाराज केवल अपने निमित्त कुछ करना होता तो मैं घर रह के सब कुछ करता, परन्तु हमारा उद्देश्य है समग्र जगत् के मनुष्य गण को ज्ञानशिक्षा प्रदान करना, हे पित: यह महत् कार्य्य सम्पादन के निमित्त आप प्रसन्न होकर अनुमति प्रदान कीजिये इसमें आप की गौरव वृद्धि होगी, जगद्वासीजन गण आप की प्रशंसा करैंगे, एवं संसार का दुर्नीति अपनो-

टन होकर निर्वाण मुक्ति का प्रशस्त पथ प्रकाशित होगा ।

महा०—हे सिद्धार्थ ! हे प्राणाधिक पुत्र तुम कौन हो तुम सामान्य मनुष्य नहीं हो अवश्य किसी महापुरुषने आके इस दीन हीन का पुत्र होकर हमको कृतार्थ किया है ऐसेही अब हम समझते हैं और मैं धन्य हूं, जाव पुत्र जाव वत्स ! अब मैं तुमको निषेध नहीं करूंगा अब तुमारा उपदेशपूर्ण वचन सुन कर मेरे ज्ञान चक्षु उन्मिलित हो गये हैं, अब मुझे दिव्य ज्ञान हो गया, संसार के मनुष्य गण को उद्धार का पथ दिखाने के निमित्त हम तुमको प्रसन्नचित्त से अनुमति देते हैं जब तुमने पिता सम्बोधन करके हमको धन्य किया है तब अपत्य स्नेह के वश से आशीर्वाद भी करता हूं कि तुमारा मनोरथ सफल होय ।

सि०—हे पिता संसार में सब पिता से आप आदर्श पिता हैं, बड़े भाग्य से आप के सदृश स्नेहमय कर्तव्य परायण पुत्रवत् सल मिलते हैं, आप धन्य हैं आप के चरण में मेरा कोटि दण्डवत् प्रणाम है । (महाराज के चरण में सिद्धार्थ का गिरना और महाराज का उठाना वो आलिंगन करना)

सा०—हे महाराज! यह आप क्या करते हैं, एकही पुत्र जो आप के जलपिण्डस्थल हैं उन्हीं को आप तपस्या के निमित्त विदा करते हैं ।

पञ्चम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

कपिलवस्तु का प्रान्त भाग, बन पथ ।

सिद्धार्थ वो छन्दक का प्रवेश ।

छन्दक—हे कुमार ! बहु जन्म के तपस्या के फल से भी जो राज्यैश्वर्य्य भोग नहीं मिलता है बहु जन्म के सुकृत फल से जो गुणवती साध्वी स्त्रीरत्न किसी के भाग्य में भी नहीं मिलती है । एवं बहु जन्म के पुण्य फल से जो अलौकिक रूपलावण्ययुक्त पुत्र सब के अदृष्ट में भी नहीं होता है । इन सभों का समावेश आपही के भाग्य से एकत्र मिला था । इन सबों में से एक को भी प्राप्त होने से मनुष्य अपने को बड़ा भारी भाग्यमान समझते हैं, आपने संसार के सुख भोग करने की समस्त सामग्री प्राप्त होने पर भी अति तुच्छवत् सब को त्याग कर दिया । जो वस्तु प्राप्त होने के निमित्त कितने मनुष्य देवाराधना, दान, पुण्य, पूजा, अनुष्ठान इत्यादि करते हैं जिस पुत्र मुख निरीक्षण करने के लिये कितने अभागी मनुष्य आग्रह करते हैं ऐसे अमूल्य पुत्र रत्न को आप ने अति सामान्य ज्ञान करके त्याग कर दिया, शेष विदा होने के समय में भी एक बार उस

बालक को गोदी में लेकर, मुखचुम्बन नहीं किया, अच्छी तरह से उनके मुखकमल के ऊपर दृष्टिपात नहीं किया। धन्य आप का वैराग्य, धन्य आपके हृदय का वेग !

सिद्धार्थ हे छन्दक ! जो कार्य्य करना है वह कार्य्य इसी तरह से करना चाहिए. संसार के माया मोह से कर्तव्य भूल जाना उचित नहीं है। अब तुम राजधानी को चले जाव हमारे शोकातुर पिता माता को प्रबोध वो शान्तना देकर कहना कि संसार में सबही अनित्य है एकमात्र नित्य वस्तु ज्ञानही है उस ज्ञान को लाभ करना संसार में जन्म ग्रहण करने का मुख्य उद्देश्य है इस कारण से उस ज्ञान का मार्ग निर्णय करने के निमित्त यत्न करूंगा। जाओ राजपुरी में चले जाओ।

छन्दक—हे राजपुत्र ! आपको अकेला छोड़ के मैं कैसे जाऊं व्याकुलहृदय महाराज वो शोकातुरा महारानी जब मुझ से पूछेंगी कि हमारे सिद्धार्थ को कहां छोड़ा? तब मैं यह वज्ररूपी वाक्य कैसे कहूंगा कि कुमार को मैं वन में अकेला छोड़ आया हूं। यह बात सुन कर महाराज वो महारानी के शरीर में प्राण नहीं रहेंगे।

कुमार हे छन्दक ! हमारे पूजनीय माता पिता को हमारा प्रणाम कह देना वो यह प्रबोध देना कि किसी

समय में मैं अवश्य आकर उनके चरण का दर्शन करूंगा। अब उन घोड़ों को जिस पर हम सवार होकर इतनी दूर आये हैं और हमारा यह राजपरिच्छद तुम ले जाव (वस्त्रोन्मोचन)

छन्दक—हे देव! हे राजपुत्र! कपड़ा आप मत उतारिये आप का यह दीन भाव हमसे देखा नहीं जाता। यह वेष देख कर हमारा कलेजा फटा जाता है। (रोदन)

सि० हे वत्स! तुम मत रोओ हमारा कहना सुनो जैसा हम कहते हैं वैसाही करो।

छ०—नहीं कुमार! हमारा किया यह नहीं होगा, इस अवस्था में आप को छोड़ के हम कभी नहीं जा सके, हमको क्षमा कीजिये यह चिरानुगत सेवक आप की सेवा करने के लिय साथही चलेगा

सि०—सुनो छन्दक! मेरा उद्देश्य स्वतन्त्र है मैं अपने आदमियों में से किसी को साथ नहीं रक्खूंगा। हे छन्दक तुम जाव हमारे कर्तव्य में बाधा मत करो पुत्र कातर मेरे वृद्ध जनकजननी को शान्त करना (वस्त्रादि छन्दक को देना)

छ०—हे राजकुमार! आप के पहिरने का कपड़ा ले के हम किस तरह से महाराज के पास जांयगे यह कपड़ा देख के महाराज हमको क्या कहैंगे और कैसे धीरज धरैंगे (रोदन)

सि०—अच्छा ! हमारे परित्यक्त वस्त्र को तुम महाराज के सामने मत ले जाना। केवल मात्र हमारा सन्देस वो आश्रामवाणी पिता से कह देना।

छ०—(स्वगत) अब मैं क्या करूं इस निर्जन बन में इस सुकुमार राजपुत्र को अकेले छोड़ कर मैं कैसे जाऊं, इतन दिनों से मैंने महाराज का निमक खाया और महाराज के अन्न से शरीर धारण किया आज तक हमारे बाल बच्चे महाराज ही के अन्न से जीते हैं, अब मैं किस तरह से अकृतज्ञ होकर कुमार को इस दशा में छोड़ के राजधानी में मुंह दिखाऊंगा। महाराज सुन के मुझे क्या कहेंगे, हाय ! मैं बड़े ही संकट में पड़ा।

सि०—जाव छन्दक खड़े होके क्या शोचते हो। अभी तुम कपिलवस्तु को चले जाव।

छ० और आप क्या करेंगे ?

सि०—जहां मन होगा चला जाऊंगा।

छ०—आप को छोड़ के जाना हमारा किया नहीं होगा।

सि०—क्यों छन्दक हमारे कार्य्य में तुम क्यों प्रतिबन्धक आचरण करते हो ?

छ०—हे राजपुत्र ! आप के कर्तव्य में किसी तरह का विघ्न करने का हमारा सामर्थ्य नहीं है।

सि०—तब क्यों हमारा कहना नहीं मानते हो ?

छ०—हे राजकुमार ! यह कभी सम्भव हो सका है जो आप का कहना मैं नहीं मानूंगा मैं आप का चिरानुगत आज्ञानुवर्त्ती भृत्य हूं।

सि० अच्छा तो अभी मेरा सग छोड़ के यह सब वस्त्रादि उठा के और वह घोड़ा लेकर तुम राजधानी को चले जाव, एक मुहूर्त अब विलम्ब मत करो।

छ०—यथाआज्ञा युवराज ! हमारा अपराध क्षमा कीजिये मैं आपही की आज्ञा पालन करता हूं।

सिद्धार्थ को प्रणाम वो प्रस्थान।

सि०—(स्वगत) अब तो मैं सब प्रकार के सांसारिक स्नेह और मोह के बन्धन से मुक्त हो गया हूं अब जो हमारा उद्देश्य है ज्ञान प्रचार करना वह कार्य्य करना चाहिये। योग बल से किस तरह से ज्ञानोपार्जन होता है वह ज्ञानही से किस तरह से निर्वाणमुक्ति प्राप्त होती है इसका मार्ग सर्वसाधारण को दिखाना चाहिये। मैंने सुना है कि विन्ध्याचल पर्वत प्रदेश के राजा महाराज विम्बसार नवरात्र में देवी भगवती की आराधना करने के निमित्त एक लक्ष बकरा भेड़ा महिष आदि जीवगण को बलिदान करते हैं। हमारा प्रथम कार्य उस पशुघाती राजा को "अहिंसा परमो

धर्म्मः" को ज्ञानशिक्षा देना होगा। विन्ध्याचल यहां से पश्चिम दिशा में है अब हमको वहीं जाना चाहिये, देखा जाय यह बन पथ और कितनी दूर तक है। (धोरे २ प्रस्थान)

पञ्चम अङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

निविड़ अरण्यप्रदेश।

मिट्ठू, चित्तू, बूटा वो गोगा चारो ठगों का प्रवेश।

मिट्ठू—कल कौनो ससुरा, यहि पेड़ नाहीं देख पड़ल, कल हमरे घरे बिलकुल फांके भयल।

चित्तू—भाई फांका तो दुसरै चीज हौ, बिना एको जीव मरले रहल नाहीं जात।

बूटा—आज यतनो बेर जौं केहु आय जात, ओकरे पास चाहे किछु होत चाहे न होत लेकिन हमतो बिना मरले न छोड़ित।

गोगा—भाइओ सुनत जा ओके मारैं के चाही जेसे कुछ, मिले, बिना मतलब जीवहिंसा करब हमैं पसन्द नाहीं हौ

बूटा—मिलै कुछ चाहे न मिलै लेकिन मारने हमहन के

रोओ हौ, हमहन धर्म्म कै सदावर्त लेय के येहि बन में नाहीं बैठल हई जो धर्म कै सदावर्त लेके हमनन इहां बैठब तौ मेहरारू लड़िका का खइहैं ?

मिट्ठू—अबहीं झूठैं कवन बात चीत करीं भाई, परमेसर केहु के कालबस कयके पठै देय तौं अलबत्ता देखल जाय ।

चित्तू—बिना केहू के मरले तौ हममे रहल नाहीं जात ।-

गोगा—तैं तौ सरवा ऐसन बेसहूर हउए कि तैं अपने बेटवै के मरले ।

मि०—ई बात कैसन हौ ?

गोगा—ओहि दिन एकर बेटवा धोअल कपड़ा लत्ता पहिर के अपने मेहरारू के बलावै बदे ससुरार जात रहल तौन येहि बन में ई ओके मारै लगल तब ऊ कहलेस कि बाबू ई तौ हम हई, तब ई ससुरा कहै कि ऐसने बखत प सबही सरवा बाबू कहलैं इहै कहत २ मार घललेस फर जब कपड़ा लत्ता और ओमें दुयठे चवन्नी रहल, कुल बटोर क बाँध के अपने मेहरारू के पास ले गयल कि इहै आज कै कमाई हौ तब ऊ लगल रोवै कि अरे निर्बन्सा ई तौ कपड़ा लत्ता हमरे बेटवा (फंकू) के हौ ई तैं का कइले एकरे बाद दुनौ मर्द मेहरारू बैठ के रोवै लगलैं ई ऐसन बेकूफ हउवै ।

चित्र०—हे भाई ! जब २ हम ओहि बात के सोचो ला तब २ हमें बड़ी रोआई, आवै लय, बलुक हम अपने मन में स चलो को अब कबों: केहु के न मारब लेकिन बिना मरले हमसे रहल नाहीं जात हम का करीं।

मि०—चुप २, केहु के गोड़ के आहट बुझात बाय केहु आदमी आवत होई।

गोगा हां, केहु आवत तो बाय लेकिन मालूम होला कौनो भिखमंगा हो, काहे से कि, सकल से ओकरे पास कुछ बुझात नाहीं।

सिद्धार्थ का प्रवेश।

गोगा—तूं के हउअ और कहां से आवत हउअ।

सि०—मैं भिक्षुक हूं और कपिलवस्तु राजधानी से आता हूं तुम लोग कौन हो और इस निर्जन बन में बैठ के क्या करते हो।

मि०—जे केहु यहि रस्ते आवा ला ओकर हमहन काल हई जेकर मरे क दिन पुरा होला उहै एहि पैंड़े आ-वाला ओही के हमहन मारीला बस उहैं खड़ा रह, अब आगे मत बढ़।

सि०—हमको बध करके तुम लोग क्या करोगे।

मि० औन तोहरे पास बाय तवन लेय लेब।

सि०—यह तो तुम लोग देखते हो कि सेवाय कोपीन के और कुछ हमारे पास नहीं है मैंने संसार छोड़ के वाणप्रस्थ आश्रम धारण किया है।

गोगा देखऽ भाई एनकर बोली बड़ी मीठी बाय ई तो केहु साधारण मनुष्य नाहीं मालूम होतैं।

सि०—हमारे बध करने से तुमको कुछ भी प्राप्त न होगा और यह जो सब पथिकों को तुमलोग मार२ के और अपने परिवार का पोषण करते हो तो जो धन तुम एतने पाप से उपार्जन करके ले जाते हो उसको तो तुमारे कुटुम्ब भर भोजन करते हैं और इस बड़े भारी पातक के भी परिवारवाले भागी हैं कि नहीं ? यदि पाप के भागी वे लोग नहीं हैं केवल धन के भागी हैं तब तुम लोग ऐसा भारी अपराध क्यों करते हो।

गोगा—हे भाइयो ई साधु बहुत ठीक बात कहत बाय एक बर एक आदमी खून कइले रहल ऊ सरकार में धय गयल और ओकरे फांसी कै हुकुम भयल तौन हम ओकरे मेहरारू से जाय के कहली कि तोहरे आदमी के फांसी कै हुकुम भयल तूं जाय के ओकरे छोड़ावे के उपाय करऽ तब ऊ हमसे कहलेस की हम का करीं जे जौन करी तवन भोगी येहि से हम जानी ला कि पाप कै हिस्सा केहू न लेई।

सि०—तब क्यों यह सब पाप करते हो ?

चित्त०—पेट कैसे भरों।

सि०—पेट भरने के वास्ते नाना प्रकार के उपाय हैं मंगलमय विधाता ने कार्य्य करने के निमित्त हस्त पद चक्षु कर्ण इत्यादि दिये हैं इन द्वारा उपार्जन कर के जीविकानिर्वाह करें हिंसा करने के लिये परम कारुणिक, परमेश्वर ने तुम लोगों को बल नहीं दिया। परिश्रम करके अर्थ उपार्जन द्वारा संसार में परिवार का पालन करो ऐसी उपयोगी ज्ञान बुद्धि भी तुम लोगों को है तब वह अंग प्रत्यंग उस बुद्धि का सद्‌व्योहार न करके हिंसा वो दुर्बुद्धि के वशवर्त्ती होकर नरहत्या करके क्यों पाप संचय करते हो ? संसार में स्त्री पुत्र परिवारादि कोई किसी का नहीं है जब तक जीवित रहोगे तभी तक सम्बन्ध मात्र है. मरने बाद किसी के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता, कोई साथ में भी नहीं जाता. केवल मात्र उपार्जित धर्म्म और अधर्म्म संग जाता है और उसी का फल भोग करना पड़ता है।

गोगा—हे प्रभो ! आज हमरी आंख खुल गइल, अब हम सोचत हई कि जे पाप के फल भोग हमहीं के करे के पड़ी अब हम घरे लौट के न जाब येही साधू बाबा के संगे चेला बनके रह जाब ।

मिट्ठु—का जानो भाई येही बाबा में कुछ ऐसन गुन बाय जे देखते हमरो मन ई काम से अलग होय गयल।

चित्त्. क महराज? तोहार आसन कहां हौ? अब तो हमहन तोहार चेला होय गइलो।

गोगा—हे प्रभो! हमहन बड़ा पषण्डी हई कृपा कय के हमहन के चेला कयल्या जवन तूं कहबा तौने हमहन करब।

सि०—हे भाइयो! आज तुम लोगों के ऊपर हम बहुत प्रसन्न भये तुम लोगों का यथार्थ अनुताप देख कर और सरल वाक्य सुन कर हम मोहित हो गये हैं, जब तुम लोगों के मन में यह भाव बैठ गया कि यह नरहत्या करना महा पाप है तब तुम लोगों की मुक्ति का पथ प्रशस्त हो गया है अब किसी की हिंसा मत करना परद्रव्यहरण परदाराभिलाष मादक-सेवन सम्यक् प्रकार से परित्याग करना, परोपकार के वास्ते अपना प्राण तक दे देना कदापि मिथ्या मत कहना अपने परिश्रम से उपार्जन कर के शाक अन्न भोजन में भी सन्तुष्ट रहना येही संसारियों का परम धर्म्म है। अब मैं जाता हूं फिर जब प्रत्यागमन करूंगा तब तुम लोगों से साक्षात करने का अभिप्राय है।

गोगा—हे देव! अब आपके अमृतरूपी बचन सुन के

हमलोगों ऐसे पाषण्डियों को भी ज्ञान हो गया, आज आप यहीं रह जांय और हमलोगों के घर पर चल के भोजनादि कर के कल जहां आप की इच्छा होगी पहुंचाय दूंगा।

मि० हे प्रभो! कृपा कर के जब ऐसा ज्ञान आप ने हम लोगों को दिया है तब हमलोग अब आप का संग न छोड़ब, भिक्षा कर के आप जैसे अपना निर्वाह करते हैं हमलोग भी वैसही करेंगे।

सि०—नहीं वत्स! ऐसा न करना चाहिए तुमलोग गृहस्थ हो गृहस्थाश्रम का उपयुक्त कार्य्य करना वो धर्म्म पालन करना तुम लोगों को उचित है अब मैं जाता हूं जैसा मैंने उपदेश दिया है उसो तरह से चलना। बिन्ध्याचल पर्वत प्रदेश में जो पाण्डव शैल है जिसकि राजा महाराज बिम्बसार हैं वहां जाने का रास्ता हमको बताओ अब हम वहीं जांयगे।

गोगा हे प्रभो! आप को जब हमलोगों ने गुरू कर कि मान लिया तब आप के साथ अधिक बात करना उचित नहीं है जैसा आप का अभिप्राय होय वैसाही होय बिन्ध्याचल का रास्ता यहां से बराबर पश्चिम है सामने से सीधे बराबर चले जाइये।

सि० आज हम बहुत खुश हुए तुम लोगों के ऊपर हू

दय से प्रसन्न भये हम तुम लोगों को आशीर्वाद देते हैं कि धर्म्म पथ में तुम लोगों का चित्त सदा रहे. बस अब मैं जाता हूं।

चारो ठग।—प्रणाम महाराज (चारो का दण्डवत् प्रणाम)

सि०—खुश रहो सब लोग।

सिद्धार्थ का प्रस्थान।

गोगा—हे भाइयो! बस आज हमलोगों को नवीन जन्म का फल हुआ चलो अब घर चलें यह काम अब कभी न करेंगे।

मि०—चलो, बस यह जगह और कभी आने लायक नहीं है।

चि०—हमने तो सोचा कि अब पालको ढोय के परिवार को पोषण करेंगे।

बूटा—हम तो भाई अब हर जोत के खायल करब।

चारो का प्रस्थान।

पटाक्षेपण।

षष्ठ अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

विन्ध्याचल प्रदेश।

पाण्डवशैल के नरपति महाराज बिम्बसार का दुर्गामन्दिर।

महाराज बिम्बसार दुर्गाप्रसाद और चण्डाप्रसाद पुरो-

हितदय, तथा पशुपालक, बकरा वो भेड़ा लेकर, खड्ग हस्त पशुघातक दण्डायमान, नेपथ्य में वाद्यध्वनि, दुर्गाप्रसाद वो चण्डीप्रसाद पुरोहित द्रव्यकर्त्तृक भगवती का पूजन समापन करते हैं।

दुर्गाप्रसाद—हे महाराज! भगवती का पूजन तो हो गया अब बलिप्रदान प्रारम्भ करना चाहिए, आज महानवमी है, नव सहस्र बलिप्रदान होना आवश्यक है। सुनो रे पशुघातको! बलिप्रदान करने का खड्ग देवीजी के सामने रख देव, हम मन्त्रपूत कर देंय; और हे पशुपालक तुम भी सुनो बकरा भेड़ा वो महिषादि पशुओं को स्नान करा के सामने आंगन में खड़ा कर देव, हम भगवती के उद्देश्य में उत्सर्ग कर देंय।

घातक—जो आज्ञा (भगवती के सामने खड्ग स्थापन)।

दुर्गा०—ओ३म्! खड्गाय खरधाराय शक्तिकार्यार्थतत्पर।
बलिश्छेद्यस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमोऽस्तुते।

पशुपालक—हम सब पशुओं को नहवा लेवें।

चण्डीप्रसाद—हां जाओ (महाराज से) हे महाराज आप भी भगवती को प्रणाम कर के जांय, कल प्रात:काल आकर पुन: दर्शन कर प्रसाद ग्रहण कीजियेगा आज दिन और रात्रि केवल बलिप्रदान होगा।

प्रतिहारी का प्रवेश।

प्रतिहारी—महाराज की जय होय।

बिम्बसार—क्यों प्रतिहारी क्या संदेश है?

प्रतिहारी—हे पृथ्वीनाथ! वह भिक्षुक जिनका अलौकिक रूप लावण्य देख कर व ज्ञानपूर्ण उपदेश सुन कर कितने मनुष्य उनके चेला हो गये हैं वे भिक्षापात्र हस्त में लेकर चुटकी मांगते फिरते हुये चले आते हैं और जो राजा और गरीब से भी गरीब सब लोगों को बराबर समझते हैं। जिनको देखने के निमित्त महाराज को भी कई बार इच्छा हुई थी वही भिक्षुक आके देवीजी के मन्दिर के द्वार पर खड़े हैं प्रार्थना करते हैं कि महाराज से भेंट होय।

बिम्बसार—प्रतिहारी! कोई क्षति नहीं है तुम जाव अभी उनको सन्मानपूर्वक हमारे पास लाओ।

प्रतिहारी—जो आज्ञा महाराज।

चण्डी०—(दुर्गाप्रसाद से) हे भाई यह जो भिक्षुक है वह बड़ा भारी ठग है, देखो तो अब आता है यह बड़ २ भारी पण्डितों को भी अपने मत में ले आया और उनको इसने चेला बना लिया।

दुर्गा०—क्या वह बड़ा भारी विद्वान् है?

चण्डी०—विद्वान तो हई है पर उसको युक्ति, तर्क, दृष्टान्त,

उपदेश, ऐसे कठिन हैं कि जिस्से सब कोई परास्त हो जाते हैं, जैसे कोई नदिया शान्तिपुर से न्यायशास्त्र पढ़ के आया है।

दुर्गा०—हां! ऐसा है भला इसका मत क्या है?

चण्डो०—उसका मत हमलोगों की रोजो मारना है।

दुर्गा०—कैसे?

चण्डो०—अरे इसका मत है 'अहिंसा परमोधर्मः' बलिदान रहित करना।

दुर्गा०—ऐसा!

चण्डो० हां देखो अब आता है।

(प्रतिहारी के साथ सिद्धार्थ का प्रवेश)

सिद्धार्थ—जयोस्तु महाराजस्य।

बिम्बसार—हे भगवन! आज आप के पदार्पण से हमारा गृह पवित्र हुआ हमारा जन्म सफल हुआ वो हमारा क्रिया कर्म्म सब सार्थक हुआ।

सि०—हे धरणीपाल! मैंने सुना है आप परम धार्म्मिक नरपति हैं दुष्ट का दमन वो शिष्ट का पालन करके अपत्य निर्विशेष से प्रजा का पालन करते हैं। साम, दाम दण्ड भेदादि राजनीति में आप कुशल हैं, परन्तु इन सब निरपराध पशुकुल का बध करके क्यों आप पाप संचय करते हैं? सदाव्रत आदि सत्कार्य्य का पुण्य आप के इसी महापाप से नाश हो जाता है।

चण्डी०—(दुर्गाप्रसाद से) देखो भाई जो हमने कहा था वही बात है, यहां भी महाराज को चेला बनाने आया है कहीं महाराज को ऐसी बुद्धि न हो जाय कि बलिदान रोक देंय नहीं तो हमलोग और हमारे बाल बच्चे सब भूखों मर जांयगे।

विम्ब०—हे महाभाग! मैं मिथ्या पशुबध नहीं करता हूं जगन्माता जगदम्बा के प्रतिकामनार्थ, मैं भगवती के निकट यथाशास्त्र बलिप्रदान करता हूं, इसमें पाप क्यों होगा?

सि०—हे महाराज! जब जीवमात्रही विश्वेश्वरी जगन्माता के सन्तान हैं तब माता के सामने एक सन्तान यदि अपर सन्तान को, माता को प्रसन्न करने के निमित्त बध करे तो माता प्रसन्न नहीं हो सक्ती, क्योंकि माता के निकट सब सन्तान बराबर हैं।

चण्डी०—यह भंडपना यहां मत करना, यह भगवती का आदि स्थान है।

सि०—हे भाई, समग्र विश्व, ब्रह्मांड, जगन्माता भगवती का स्थान है, माता विश्वव्यापिनी हैं, भला यह तो हमको बताओ कि भगवती कहां नहीं हैं?

दुर्गा०—यह सब चालाकी की बात रहने देव, हमलोग शाक्त हैं भगवती के उपासक काली जी के पूजनेवाले

हमलोग अच्छी तरह से जानते हैं कि नर-बलि से देवी अधिक तुष्ट होती हैं।

सिद्धार्थ—हे भाइयो! यदि सब पशुओं को छोड़कर और उनके जगह पर हमारा बलिप्रदान करके आप लोग खुश होंय तो हमारी इसमें बड़ी प्रसन्नता है क्योंकि इतने जीव तो बचे रहेंगे।

बिम्बसार—(सिद्धार्थ के पदप्रान्त में पतित होकर) हे देव! हे करुणामय! आप कौन हैं? "आत्मोपमिन्न भूतानां दयां कुर्वन्ति साधवः" यह भाव आपही में वर्तमान है और आप यथार्थ साधु हैं। हे कृपानिधान! जब कृपा करके इस अधम पापण्डी को दर्शन से कृतार्थ किया है तब कहिये संसार में क्या करना चाहिए, कौन मार्ग आश्रय करने से मुक्ति मिलेगी?

चण्डी० (दूर्गा से) अब सब हो चुका अब हमलोग कुटुम्ब सहित भूखों मरेंगे।

सि०—'अहिंसा परमोधर्मः यही ज्ञान मुख्य ज्ञान समझ के कार्य्य करना चाहिए, जीवहिंसा से धर्मपथ नहीं मिलता है, जीवात्मा सब का बराबर है किसी प्राणी का बध करने का अधिकार किसी को नहीं है, कष्ट पाने से जैसे आप को क्लेश होता है वैसाही सब को होता है। सर्व शक्तिमान परमकारुणिक मंगलमय विधाता के निकट सब बराबर हैं।

बिम्बसार—हे प्रभो ! हे दीनबन्धो ! अब हमारा ज्ञान चक्षु उन्मीलित हो गया, अब हम अच्छी तरह से समझते हैं कि पशुहत्या करना उचित नहीं है। आज से हम यह बात डुग्गीद्वारा प्रचार कर देंगे कि कोई व्यक्ति किसी तरह से जीवहिंसा न करने पावे।

सि०—हे महाराज ! आप का ज्ञान हिंसारूप अन्धकार से आच्छन्न रहा अब अहिंसारूप ज्ञान की पूर्ण ज्योति आप के हृदय में बिकाश हो गई है। आज आपका यह भाव देख कर हमारा मन अति प्रफुल्लित हुआ है।

बिंबसार—हे करुणामय ! यह सब आपही की कृपा है। एक विषय जानने के लिये हमारा बहुत आग्रह होता है यदि कोई क्षति न होय तो प्रकाश कर के हमारे समत्सुक अन्तःकरण को परितृप्त कीजिये।

सि०—हे महिपते ! कहिये किस विषय को जानने के निमित्त आपको कौतूहल हुआ है ?।

बिंब०—हे देव ! आप का अमानुषिक सौन्दर्य्य देख कर आपको कोई साधारण मनुष्य नहीं कह सक्ता, कहिये प्रभो ! आप का जन्मस्थान कहां है और कौन राजधानी आप के विरह से दुःखी है ?

सि०—हे नरेश ! मैं कपिलवस्तु के राजा महाराज शुद्धोदन का एकमात्र पुत्र हूं। ज्ञानमार्ग के अन्वेषण करने के निमित्त मैंने इस आश्रम को ग्रहण किया है।

बिंब०—आप हमारे परम मित्र धार्मिक अग्रगण्य महाराज शुद्धोदन के सुपुत्र हैं, आज हम धन्य हुये। यह भी आपही की राजधानी है, जब हमारे भाग्य से आप यहां आ गये हैं तब कृपा करके यहीं रहिये यह सब आपही का है।

सि०—हे महिपाल! आप का कल्याण होय, काम, बिष के बराबर नाना प्रकार के दोषों का आकर है, कामही मनुष्य को नरक में ले जाता है काम्य वस्तु यदि न मिले तो शरीर वो मन दुखी होते हैं और मिलने पर भी आकांक्षा की परितृप्ति नहीं होती है। ऐसे काम्यवस्तु को उपभोग करने के निमित्त हमारा प्रयोजन नहीं है। हे राजन् इसी कारण से हम राज्य, ऐश्वर्य्य, पिता, पुत्र, परिवारादि समस्त परित्यागपूर्वक नित्य-ज्ञान लाभ करने के लिये बहिर्गत हुये हैं आप और मिथ्या काम्यवस्तु का प्रलोभन मत दिखाइये।

बिम्बसार—हे प्रभो! मैं अति अज्ञानी हूं, दया करके मेरा अपराध क्षमा कीजिये और हम आप को कुछ नहीं कहेंगे।

सि०—अच्छा तो अब मैं आप से बिदा होना चाहता हूं।

बिम्ब०—आप को बिदा करने के लिये हमारा चित्त नहीं चाहता है परन्तु आप की इच्छा के बिपरीत हम कुछ

नहीं कर सकते, जो आप को अभिमत होय कीजिये परन्तु हमारी एक अति विनीत प्रार्थना है कि यदि कभी इस रास्ते आना हो तो इस अभागी को दर्शन देकर कृतार्थ कीजियेगा।

सि०—अच्छा यदि इस रास्ते कभी आऊंगा तो मैं अवश्य आप के गृह में उपस्थित होऊंगा, अब मैं चलता हूं।

बिम्ब०—प्रार्थना जिसमें पूर्ण होय (दण्डवत् प्रणाम)

सिद्धार्थ का प्रस्थान।

बिंबसार—सुनो अब आज से हमारे राज्य में कोई व्यक्ति बलिदान वा किसी तरह से जीवहत्या न करने पावे डुग्गी पिटवा के घोषणा करा दिया जाय कि जो कोई बलिदान वा पशुवध वा हिंसा करेगा उसको बड़ा कठिन दण्ड होगा।

चण्डी०—हे महाराज जो लक्ष बलिदान का सङ्कल्प किया गया है और जो सब पशु भगवती के सामने खड़े किये गये हैं वे सब क्या किये जायंगे।

बिम्ब०—उन सबों को अभी छोड़ देव और तुम लोग भी आज से इस कर्म को मत करो।

चंडी०—यथा आज्ञा महाराज।

दुर्गा—हे महाराज! हमलोगों की जीविका का क्या उपाय होगा?